पढ़ें और सीखें योजना

अहिल्याबाई

वीरेन्द्र तँवर

विभागीय सहयोग
हीरालाल बाछोतिया

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

मार्च 1991
फाल्गुन 1912
PD 15T—SD

प्रकाशन सहयोग

सी०एन० राव : अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग

प्रभाकर द्विवेदी	मुख्य संपादक	**यू० प्रभाकर राव**	मुख्य उत्पादन अधिका
आशीष सिन्हा	संपादक	**डी० साई प्रसाद**	उत्पादन अधिकारी
शर्मा दत्त	सहायक संपादक	**सुबोध श्रीवास्तव**	उत्पादन सहायक
		कर्ण कुमार चड्ढा	वरिष्ठ कलाकार

आवरण : अमित श्रीवास्तव

आवरण फोटो : महेश्वर में नर्मदा-तट पर अहिल्याबाई द्वारा निर्मित किला

मूल्य रु. 6.00

प्रकाशन विभाग मे, सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा एस पी. इलेक्ट्रानिक्स 6, वेस्ट मैरिन रोड, नई दिल्ली 110002 द्वारा फोटोकम्पोज होकर कोणार्क प्रेस, आर 82/1, रमेश पार्क, लक्ष्मी नगर, दिल्ली 110092 द्वारा मुद्रित।

विषय सूची

प्राक्कथन

विद्यालय शिक्षा के सभी स्तरों के लिए अच्छे शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रमों और पाठ्यपुस्तकों के निर्माण की दिशा में हमारी परिषद् पिछले पच्चीस वर्षों से कार्य कर रही है। हमारे कार्य का प्रभाव भारत के सभी राज्यों और संघ शासित प्रदेशो में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में पड़ा है और इस पर परिषद् के कार्यकर्त्ता संतोष का अनुभव कर सकते हैं।

किन्तु हमने देखा है कि अच्छे पाठ्यक्रम और अच्छी पाठ्यपुस्तकों के बावजूद हमारे विद्यार्थियों की रुचि स्वतः पढ़ने की ओर अधिक नहीं बढ़ती। इसका एक मुख्य कारण अवश्य ही हमारी दूषित परीक्षा प्रणाली है जिनमें पाठ्यपुस्तकों में दिए गए ज्ञान की ही परीक्षा ली जाती है। इस कारण बहुत ही कम विद्यालयों में कोर्स से बाहर की पुस्तकों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है लेकिन अतिरिक्त पठन में बच्चों की रुचि न होने का एक बड़ा कारण यह भी है कि विभिन्न आयुवर्ग के बच्चों के लिए कम मूल्य की अच्छी पुस्तकें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध भी नहीं हैं। यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में इस कमी को पूरा करने के लिए कुछ काम प्रारंभ हुआ है पर वह बहुत ही नाकाफी है।

इस दृष्टि से परिषद् ने बच्चों की पुस्तकों के रूप में लेखन की दिशा में महत्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की है । इसके अंतर्गत ''पढ़ें और सीखें'' शीर्षक से एक पुस्तकमाला तैयार करने का विचार है, जिसमें विभिन्न आयुवर्ग के बच्चों के लिए सरल भाषा और

रोचक शैली में अनेक विषयों पर बड़ी संख्या में पुस्तके तैयार की जाएँगी। हम आशा करते हैं कि 1991 के अंत तक हिन्दी में हम निम्नलिखित विषयों पर 50 पुस्तकें प्रकाशित कर सकेंगे।

(क) शिशुओं के लिए पुस्तकें
(ख) कथा-साहित्य
(ग) जीवनियाँ
(घ) देश-विदेश परिचय
(ङ) सांस्कृतिक विषय
(च) वैज्ञानिक विषय
(छ) सामाजिक विज्ञान के विषय

इन पुस्तकों के निर्माण में हम प्रसिद्ध लेखकों, वैज्ञानिकों, अनुभवी अध्यापकों और योग्य कलाकारों का सहयोग ले रहे हैं। प्रत्येक पुस्तक के प्रारूप पर भाषा, शैली और विषय-विवेचन की दृष्टि से सामूहिक विचार करके इसे अंतिम रूप दिया जाएगा।

परिषद् इस माला की पुस्तकों को लागत-मूल्य पर ही प्रकाशित कर रही है ताकि ये अपने देश के सभी कोनों में पहुँच सकें। भविष्य मे इन पुस्तकों का अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराने की भी योजना है।

हम आशा करते हैं कि शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों के क्षेत्र में किए गए कार्य की भाँति ही परिषद् की इस योजना का भी व्यापक स्वागत होगा।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखन के लिए श्री वीरेन्द्र तँवर ने हमारा निमंत्रण स्वीकार किया, जिसके लिए हम उनके अत्यंत आभारी हैं। जिन-जिन विद्वानों, अध्यापकों और कलाकारों से इस पुस्तक को अंतिम रूप देने में हमें सहयोग मिला है उनके प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

परिषद् में यह योजना प्रो. अर्जुनदेव के मार्गदर्शन में चल रही है। उनके सहयोगियों में श्रीमती संयुक्ता लूदरा, डा. रामजन्म

शर्मा, डा. सुरेश पाण्डेय, डा. हीरालाल बाछोतिया और डा. अनिरुद्ध राय सक्रिय सहयोग दे रहे हैं। विज्ञान की पुस्तकों के लेखन का कार्य हमारे विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के प्रो. रामदुलार शुक्ल देख रहे हैं। मैं अपने सभी सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद और बधाई देता हूँ।

इस माला की पुस्तकों पर बच्चों, अध्यापकों और बच्चों के माता-पिता की प्रतिक्रिया का हम स्वागत करेंगे ताकि इन पुस्तकों को और भी उपयोगी बनाने में हमें सहयोग मिल सके।

के. गोपालन
निदेशक

नई दिल्ली

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

1

एक कहानी

एक था राजा और एक थी रानी। रानी अपनी प्रजा को बहुत चाहती थी। प्रजा भी उन पर जान छिड़कती थी। उनके एक राजकुमार था और एक थी राजकुमारी। एक लड़ाई में राजा मारा गया। रानी सती होना चाहती थी। लोगों ने उसको सती नहीं होने दिया।

राजकुमार बड़ा हो गया। राज्य की बागडोर हाथ में आते ही वह मनमानी करने लगा। लोगों को बेवजह सताने लगा। प्रजा में त्राहि-त्राहि मच गई।

महारानी ने अपने बेटे को समझाया– "राजा प्रजा का पालक होता है। लोगों के दुख-दर्द दूर करता है। तुम ही प्रजा को दुख दोगे तो, वह कहाँ जाएगी? अत्याचार की नीति त्याग दो। प्रजा से प्यार करो। जनहित के काम करो। तुम साहसी दादा के पोते हो। बहादुर पिता के बेटे हो। अपने पूर्वजों की इज्जत मिट्टी में मत मिलाओ।"

उसने माँ की एक न सुनी। प्रजा पर अत्याचार करता रहा। उसे लोगों को सताने में मजा आता था। ब्राह्मणों को तो वह बहुत ही कष्ट देता था। उन्हें दान-दक्षिणा में जो चीजें मिलतीं

उसमें बिच्छू रखवा देता। बिच्छू उन्हें काट लेते। वे चीख उठते-''बचाओ-बचाओ''। उन्हें तड़पते देखकर वह बेहद खुश होता। इस प्रकार प्रजा बहुत दुखी हो गई। महारानी दुखी लोगों को प्रेम से समझाती। धीरज बंधाती। कहती- दुख दूर होंगे। रात के बाद दिन आता ही है। दुख के बाद सुख आएगा ही।

एक दिन ममतामयी माँ का खून खौल उठा। महारानी ने कहा—''मेरे पुत्र को हाथी से कुचलवा दिया जाए। वह राज करने लायक नहीं है''। एक माँ ने अपने ही बेटे को मरवा डाला। यह महारानी थी इन्दौर के होलकर राज्य की देवी—अहिल्याबाई।

मेषपाल से मल्हारराव

महाराष्ट्र प्रदेश में एक ग्राम है, ''बाफ''। मल्हारराव के पूर्वज पहले इसी गाँव में रहते थे। बाद में ये लोग ''होल'' ग्राम में जाकर बस गये। होल ग्राम महाराष्ट्र प्रदेश में पूना के पास है। होल ग्राम के निवासी होने के कारण, ये होलकर कहलाये।

मल्हारराव के पिताजी थे खण्डोजी,माँ थी जिवाई। खण्डोजी पटेल के सहायक थे। सन् 1693 में रामनवमी के पवित्र दिन जिवाई को पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई। माता-पिता पुत्र-प्राप्ति से फूले न समाए। बेटे का नाम रखा—मल्हार।

मल्हार अभी तीन वर्ष के ही थे कि पिता खण्डोजी का देहावसान हो गया। परिवार के लोग माँ-बेटे को सताने लगे। खण्डोजी की धन दौलत पर उनकी निगाहें थीं। वे मुसीबत में पड़ गए।

जिवाई ने दुखी होकर घर छोड़ दिया। वह मल्हार को लेकर भाई के घर गई। भाई भोजराज तलौदे ग्राम में रहते थे। यह ग्राम महाराष्ट्र के खानदेश क्षेत्र में है। भोजराज ग्राम के पटेल के सहायक थे। साथ ही पेशवा के एक अधिकारी के पच्चीस घुड़सवारों के नायक भी थे।

भोजराज ने मल्हार को भेड़ें चराने का काम सौंपा इसीलिए उसे मेषपाल कहा जाने लगा। कुछ समय बाद भेड़ें चराने का काम बंद करा दिया गया। तब भोजराज ने उसे अपने घोडों की देख भाल का काम सौपा। भेड़ें चराने की लकड़ी छोडकर, तलवार पकड़ी। कुछ समय बाद वह सरदार कदम बांडे की सैनिक टुकड़ी में भर्ती हो गया। छोटा सैनिक बनकर मल्हार ने अपने भावी जीवन के भव्य भवन की नींव रखी। मल्हार शीघ्र ही पच्चीस घुड़सवारों का नायक बन गया। मामा भोजराज ने अपनी बेटी, गौतमा बाई का विवाह मल्हार के साथ कर दिया।

निजाम के साथ हुए मराठों के एक युद्ध में मल्हारराव ने अद्भुत शूरवीरता दिखाई। उसने दुश्मन के नामी सेनानायकों को मौत के घाट उतार दिया। मल्हार की इस वीरता की बात पेशवा के कानों तक पहुँची। उन्होंने मल्हार को कदम बांडे के यहाँ से हटाकर अपनी सेना में भर्ती कर लिया।

मल्हारराव से महिपाल

भारत में मुगलों का साम्राज्य था। उस समय दिल्ली में मुगल बादशाह था—मुहम्मदशाह । वह नाम मात्र का बादशाह था। राजकाज की उसे कोई चिन्ता नहीं थी। वह अयोग्य व कमजोर था। रात-दिन रंग-रलियो में डूबा रहता । इसी कारण मुगल साम्राज्य के कई सूबे स्वतंत्र राज्य बन गये थे। सूबों के सूबेदारों ने मुगल साम्राज्य से संबंध तोड़ लिया था। वे स्वयं स्वतंत्र बादशाह बन बैठे थे

इस प्रकार मुगल साम्राज्य कई छोटे-छोटे राज्यों में बँट गया। इन राज्यों के शासक आपस में सदा लड़ते रहते थे। देश के चारों ओर अशांति और असंतोष था। विश्वासघात, षड़यंत्र और अन्याय का बोलबाला था। चोर-डाकुओं ने आतंक मचा रखा था।

देश की जनता असहाय और गरीब थी। उसकी बात सुनने

वाला कोई न था। खेती-बाड़ी और व्यापार-व्यवसाय सब चौपट हो रहा था। अब तक पुर्तगाल, फ्रांस, हालैण्ड और इंग्लैण्ड के व्यापारी, भारत में व्यापार करने आ चुके थे। वे व्यापार करते-करते, यहाँ अपनी जड़ें जमाने लगे। पहले फ्रांसीसियों ने अपने पैर जमाए फिर अंग्रेजों ने। धीरे-धीरे अंग्रेजों ने भारत के अधिकांश भाग पर अपना अधिकार जमा लिया।

भारत के मध्य में है, मध्यप्रदेश। मध्यप्रदेश के पश्चिम में है, मालवा का पठार। मालवा की काली माटी काफी उपजाऊ है। यह क्षेत्र हरा-भरा वन-सम्पदा से भरा-पूरा था। धन-धान्य से परिपूर्ण था। इसीलिए किसी ने ठीक ही कहा है–

मालव माटी– गहन गंभीर,
डग-डग रोटी, पग-पग नीर

यहाँ उद्योग-धन्धे उन्नत थे। व्यापार-व्यवसाय भी खूब होता था। यहाँ का माल दूर-दूर के देशों में जाता था। उस समय आवागमन के साधन आजकल जैसे नहीं थे। मालवा उत्तर और दक्षिण भारत के बीच में है। दोनों क्षेत्रों को जोड़ने वाला है । इसलिए इतिहास में इसका सदा राजनैतिक महत्व रहा है ।

मालवा पुराने समय से सभ्यता और संस्कृति का केन्द्र रहा है। कई प्राचीन ग्रंथों में मालवा की सांस्कृतिक गाथा का वर्णन है। यहाँ कई संत, वीर, पराक्रमी, राजा, महाकवि और विद्वान हुए हैं।

दक्षिण में छत्रपति शिवाजी ने सन् 1664 में मराठा राज्य की नींव डाली। मराठा राज्य धीरे-धीरे विशाल साम्राज्य बन गया। मराठों की धाक उत्तर से दक्षिण, पूर्व से पश्चिम तक जम गई । शिवाजी के कारण मुगलों को लोहे के चने चबाने पड़े ।

शिवाजी के उत्तराधिकारी अयोग्य सिद्ध हुए। मराठा साम्राज्य की सारी शक्ति पेशवा के हाथों में आ गई। प्रथम

प्रधान पेशवा थे—बालाजी विश्वनाथ । इन्होंने पूना (पणे) को राजधानी बनाया।

पेशवा बालाजी विश्वानाथ वीर थे। वे चतुर और कुशल प्रशासक थे। बड़े दूरदर्शी भी थे। उन्होंने अपनी सेना की शक्ति बढ़ाई। दिल्ली पर धावा बोला। दिल्ली का मुगल बादशाह मुहम्मदशाह युद्ध मे हार गया। इस युद्ध में मल्हारराव ने बहुत बहादुरी दिखाई। पेशवा, मल्हारराव से बहुत खुश हुए। उन्होंने उसकी वीरता का सम्मान किया। उसे पाँच सौ घुड़सवारों का नायक बना दिया।

प्रथम पेशवा बालाजी विश्वनाथ के बाद, उनका पुत्र बाजीराव पेशवा बना। इनके समय में कई युद्ध हुए। इन युद्धों में मराठों की जीत हुई। काफी धन-दौलत हाथ लगी। इन युद्धों में भी मल्हारराव ने बड़ा पराक्रम दिखाया।

पेशवा के प्रमुख सेना नायक थे— रघुजी भौंसले, आनंदराव पंवार, दामाजी गायकवाड़ राणोजी सिंधिया और मल्हारराव होलकर। इन सेनानायकों के सहयोग से पेशवा की तूती चारों ओर बोलने लगी।

उन दिनों मालवा पर मुगलों का अधिकार था। मालवे का सूबेदार था—दयाबहादुर । मालवे के सूबेदार दयाबहादुर में न दया थी और न बहादुरी । वह प्रजा को बहुत सताता था । राव नन्दलाल थे दयाबहादुर के प्रमुख अधिकारी। वे ही इस क्षेत्र की देखरेख करते थे और लगान भी वसूल करते थे। मुगल बादशाह को हर वर्ष पच्चीस हजार रुपये भेजते थे । वे वीर, साहसी और धर्म परायण थे। कहा जाता है कि इन्दौर को सबसे पहले इन्होंने ही बसाया था, उस क्षेत्र को आज भी लोग जूनी इन्दौर के नाम से जानते हैं। यह क्षेत्र खान नदी के दक्षिण में है। इन्दौर नगर में राव नन्दलाल के नाम के कई मोहल्ले भी हैं, जैसे—रावजी-बाजार, नंदलालपुरा आदि

नंदलाल ने दयाबहादुर के व्यवहार से दुखी होकर मुगल

बादशाह से शिकायत की। बादशाह के कान पर जूँ तक न रेंगी। राव नंदलाल से प्रजा का दुख देखा नहीं जाता था। उसने लगान के रुपये भेजने बंद कर दिये फिर भी मुगल बादशाह की आँखे न खुलीं।

तब राव नंदलाल ने पेशवा बाजीराव से प्रार्थना की, ''मुगलों से मालवा की प्रजा दुखी है। आप प्रजा के कष्ट दूर कीजिए इसमें मैं आपकी पूरी मदद करूँगा।''

पेशवा ऐसा मौका कब हाथ से जाने देता। सन् 1730 में मालवा पर मराठों की सेना ने धावा बोल दिया। इस सेना के सेनानायक थे-- मल्हारराव होलकर। सूबेदार दयाबहादुर ने मल्हारराव का सामना किया। उसकी सेना मराठा सेना के सामने ठहर न सकी। युद्ध में दयाबहादुर मारा गया। कुशल सेनानायक मल्हारराव की जीत हुई। विजेता मल्हारराव ने राव नंदलाल का सम्मान किया। पेशवा बाजीराव मालवा की जीत से बहुत खुश हुए। उन्होंने मल्हारराव को कई अधिकारों के साथ मालवा के 74 परगनों का अधिकार सौंप दिया। इस तरह मल्हारराव होलकर मालवा के मालिक बने।

मालवा में मराठों को ठिकाने लगाने का काम, मुगल बादशाह ने सूबेदार मुहम्मद बंगश को सौंपा। उसे भी उल्टे पैर भागना पड़ा। फिर सन् 1732 में सवाई जयसिंह मराठों का सफाया करने आए। वे भी परास्त होकर लौट गए। इस प्रकार समस्त मालवा पर मराठों का आधिपत्य हो गया।

2
बहू-बेटी

हमारे देश के पश्चिम में है– महाराष्ट्र प्रदेश। महाराष्ट्र में औरंगाबाद ज़िला है। इस ज़िले में ग्राम है– चौंड़ी। इस ग्राम के पटेल थे–मानकोजी शिंदे।

मानकोजी शिंदे सहज, सरल स्वाभाव के नेक इंसान थे। वे धार्मिक वृत्ति के थे। अतिथि सत्कार में कभी पीछे नहीं रहते थे। सामान्य सुखी गृहस्थ के मुखिया थे।

इनकी पत्नी थी, सुशीलाबाई। जैसा नाम था वैसे ही गुण थे। सुशीला एक आदर्श भारतीय नारी थीं। भगवत पूजा-पाठ, कथा-वार्ता सुनने का तो उनका रोज का नियम था।

सन् 1725 में सुशीलाबाई के एक बेटी हुई। परिवार के लोगों ने उसका नाम रखा अहिल्याबाई। अहिल्याबाई अपने माता-पिता की लाड़ली बेटी थी। वह माँ के साथ रोज मंदिर जाती। पूजा-अर्चना करती और कथा-भागवत, पुराण सुनती।

अहिल्याबाई अधिक पढ़ी-लिखी नहीं थी। उस समय लड़कियों को पढ़ाने की परम्परा भी नहीं थी।

अहिल्याबाई का घर ही पाठशाला था। शिक्षक थे– माता-पिता। माता ने अहिल्याबाई को गृह-कार्य में निपुण कर दिया था। वहीं धार्मिक आचरण-व्यवहार के संस्कार भी डाले।

उन्होंने पिता से थोड़ा पढ़ना-लिखना सीखा। मानकोजी ने कई धर्म ग्रन्थ अहिल्याबाई को पढ़ाए और पढ़कर सुनाए। इस प्रकार माता-पिता के संस्कारों का प्रभाव अहिल्याबाई पर बाल्यकाल से ही पड़ा।

बचपन के संस्कार ही बच्चों के भविष्य का निर्माण करते हैं। अहिल्याबाई भगवान शंकर की परम भक्त थी। चौंड़ी ग्राम में भगवान शंकर का छोटा-सा मंदिर था। अहिल्याबाई ने एक दिन भगवान शंकर को फूलों से खूब सजाया।

उसी दिन, मल्हारराव होल्कर विजय यात्रा सम्पन्न करके पूना लौट रहे थे। चौंड़ी ग्राम पहुँचते-पहुँचते संध्या हो गई। उन्होंने शिव-मंदिर के पास ही डेरा डाला।

मालवा के सूबेदार मल्हारराव ने ग्राम में डेरा डाला है, यह सुनकर ग्राम के पटेल, मानकोजी शिंदे उनका आदर-सत्कार करने पहँचे। अभी दोनों में चर्चा हो ही रही थीं, तभी मंदिर में आरती शुरू हुई। घंटी, घड़ियाल और शंख बज उठे। मल्हारराव, मानकोजी के साथ भगवान के दर्शन के लिए मंदिर में आये।

आरती हो रही थी, भगवान शंकर की मूर्ति के सामने एक बालिका ध्यान मग्न खड़ी थी। ध्यान मग्न बालिका के चेहरे पर अद्भुत तेज था।

मल्हारराव भगवान शिव की सजावट देखकर दंग रह गए। वहीं वे बालिका की भक्ति भावना को देखते ही रह गए। बालिका को देखते ही, उनके मन में हलचल मच गई। बालिका का सौम्य रूप उन्हें भा गया। मन ही मन कुछ निश्चय कर लिया।

तभी पुजारी आरती लेकर आया। आरती लेते हुए मल्हारराव ने पूछा— "वह बालिका किसकी है?"

"इन्हीं, पटेल मानकोजी की बेटी अहिल्याबाई है।" पुजारी ने बताया।

"भगवान की बड़ी भक्त है यह बालिका।"

"महाराज,यह रोज अपनी माँ के साथ मंदिर में आती है।"

"भगवान शंकर की इच्छा यही है। उन्हीं के दर्शन से दिशा मिली है, मानकोजी।"

मल्हारराव विचारों में खो गये। आँखों के सामने खंडेराव व अहिल्याबाई की सूरत घूमने लगी।

खंडेराव पूरे परिवार का लाडला था। अधिक लाड़-प्यार के कारण, वह जिद्दी हो गया। गुस्सैल और चिड़चिड़ा भी। शैतानी अधिक करने लगा था। चंचल बालक खंडेराव के लिए पढ़ाई-लिखाई का प्रबंध किया गया। उसका मन पढ़ने में नहीं लगा । खंडेराव कुछ बड़ा हुआ, तो पिता ने हथियार चलाना और युद्ध विद्या सीखने की व्यवस्था की। इसमें भी उसका मन नहीं लगा। खाना-पीना और मौज उड़ाना ही उसे पसंद था। मल्हारराव ने सोचा, इसकी शादी कर दी जाए। बंधन में बंध जाएगा तो सुधर जायेगा। इसीलिए वे सुकन्या की तलाश में थे।

मल्हारराव जितने वीर, बहादुर, बुद्धिमान थे, उतने ही आदमी के कुशल पारखी भी थे। अहिल्याबाई को देखते ही उन्होंने मन ही मन निश्चय कर लिया था, यदि वह बालिका मेरी पुत्र-वधू बन जाए, तो यह खंडेराव को सुधार सकती है।

मानकोजी ने मल्हारराव की बात मान ली। विवाह की तिथि तय हुई और खंडेराव का विवाह अहिल्याबाई के साथ बड़ी धूम-धाम से हुआ ।

इस प्रकार चौंड़ी गांव के पटेल की बेटी, मालवा के सूबेदार की बहू बन गई।

3

सुखी-संसार

अहिल्याबाई का व्यक्तित्त्व भव्य था। रंग था सांवला, डील-डौल सामान्य, मध्यम कद, गोल मुँह, चौड़ा ललाट और बड़ी-बड़ी आँखें थीं। मुख मंडल पर तेज था। ऐसी अहिल्याबाई बहू बनकर होलकर परिवार में आई। ससुराल का परिवार भी काफी बड़ा था।

ससुराल में अहिल्याबाई ने अपनी मधुरवाणी, कुशल व्यवहार और सेवा भावना से सबका दिल जीत लिया। वे सबकी प्यारी बहू बन गई। ससुर मल्हारराव तो बहुत ही खुश थे। बहू के घर में आते ही परिवार का वैभव बढ़ने लगा था। राज्य की सीमा फैलने लगी थी।

अहिल्याबाई सास-ससुर को माता-पिता के समान समझती थी। दिन-रात उनकी सेवा करती। वे प्रातः जल्दी उठतीं। नहा धोकर पूजा पाठ करतीं। दिन भर घर का काम करतीं। परिवार के हर सदस्य को वे खुश रखतीं।

अहिल्याबाई की सास गोतमाबाई बेहद समझदार, कर्त्तव्यपरायण, धर्मनिष्ठ और मेहनती थीं। वे घर के काम में अहिल्याबाई की मदद करतीं। मल्हारराव को युद्धों के कारण

प्रायः घर से बाहर रहना पड़ता था। गौतमाआई उनकी अनुपस्थिति में राज-काज देखतीं। अहिल्याबाई को भी साथ में रखतीं। यों सास के साथ राज-काज करने-सीखने का मौका अहिल्याबाई को भी मिला।

अहिल्याबाई का पति खंडेराव विलासी था। वह क्रोधी, हठी और झगड़ालू प्रवृत्ति का था। अहिल्याबाई शीघ्र ही अपने पति के स्वभाव व कमजोरियों को जान गई। सास-ससुर ने उसको समझाया– "बेटी धीरज से काम लेना। खंडेराव अधिक लाड़-प्यार से बिगड़ गया है। वैसे वह बहादुर, साहसी व स्वाभिमानी है। तुम उसका दिल जीतकर ही उसका हृदय परिवर्तन कर सकती हो। तुम ही उसे सुधार सकती हो। वह हमारे वंश का दीपक है, होलकर राज्य का उत्तराधिकारी है। तुम हिम्मत न हारना। भगवान शंकर तुम्हारी मदद करेंगे।"

सास-ससुर की सीख अहिल्याबाई ने मानो पल्ले से बाँध ली। हिम्मत व धीरज के साथ अपने पति के प्रति कर्त्तव्य का पालन करने लगीं। वह एक आदर्श भारतीय नारी थीं। पति को परमेश्वर मानती थीं। पति की अत्यधिक सेवा करती थीं। उनकी इच्छानुसार काम करतीं। अपने किसी भी व्यवहार से पति को कभी नाराज नहीं करतीं।

वे विवेक से काम लेती थीं। उनमें नम्रता, सेवा, त्याग और सहनशीलता के गुण भरपूर थे। अपने इन्हीं गुणों से अहिल्याबाई ने अपने पति का दिल जीत लिया। खंडेराव अहिल्याबाई को बहुत चाहने लगे। उनका मान-सम्मान करने लगे। उनकी हर बात मानने लगे।

एक दिन अहिल्याबाई ने शयन-कक्ष में रखे हथियारों की तारीफ की। पति से उनके चलाने का तरीका पूछा।

खंडेराव मौन रहे। उन्होंने हथियार चलाना सीखा ही नहीं था। तब, हथियार चलाने का तरीका कैसे बता पाते।

अहिल्याबाई ने प्रेम से कहा–"स्वामी, आप राजघराने के हैं। होलकर राज्य के उत्तराधिकारी हैं। वीर-पराक्रमी पिता के पुत्र हैं। पिताजी ने इन हथियारों की कलाबाजी से अनेक युद्ध जीते हैं। आप इन हथियारों से डरते हैं। अपने कक्ष में सजा रखा है। ये तो आपके सबल हाथों में होने चाहिए। लगता है, कई दिनों से इन हथियारों को हाथ भी नहीं लगाया है।"

"हाँ देवी, तुम ठीक कह रही हो।" पति खंडेराव बोले तो अहिल्याबाई ने आगे कहा–"स्वामी पड़े-पड़े तो तलवार की धार भोथरी हो जाती है। ढाल में जंग लग जाता है। बन्दूक का घोड़ा बिगड़ जाता है। ऐसा ही रहा, तो आप अपने राज्य की रक्षा कैसे कर पाएँगे?"

अहिल्याबाई की सीख ने खंडेराव की सोई हुई वीरता को जगा दिया। धीरे-धीरे उसने हथियार चलाना सीखा। राज-काज में रुचि लेने लगा। इसीलिए तो कहा है—सद्गुणी के साथ अवगुणी भी गुणी हो जाता है। पारस से लोहा छू जाने पर सोना हो जाता है। एक अच्छा गुरू बुद्धिहीन शिष्य को भी शास्त्रों का ज्ञाता बना देता है।

अहिल्याबाई के सद्व्यवहार से खंडेराव में काफी परिवर्तन आ गया। यह सब देखकर मल्हारराव बहुत खुश होते। बहू अहिल्याबाई की तारीफ करते न थकते । इतना ही नहीं,खंडेराव पिता के साथ युद्ध में मोर्चों पर भी जाने लगा।

होलकर परिवार में एक और खुशी की लहर आई। सन् 1745 में अहिल्याबाई ने एक पुत्र को जन्म दिया। पूरे परिवार ने खूब खुशी मनाई। राज्य में चारों ओर बधाई के बाजे बजे। बालक का नाम मालेराव रखा गया।

मालेराव घर-आंगन में दौड़ने लगा। सन् 1748 में अहिल्याबाई के एक पुत्री हुई। भाई को राखी बाँधने बहिन

आई। उसका नाम था— मुक्ताबाई। भाई-बहिन की जोड़ी को देखने वाले देखते ही रह जाते।

अहिल्याबाई का जीवन सुख से बीत रहा था। उन्हें किसी बात का अभाव न था। न दुख था न तकलीफ का नामो निशान। वे प्रसन्नतापूर्वक जीवन बिता रहीं थीं।

4

भरतपुर का युद्ध

माँ अपने बेटे को महान बनाती है। "शिवा" को शिवाजी जीजाबाई ने ही तो बनाया था। बहिन्-भाई के लिए मंगल कामना करती है। उसकी लम्बी उम्र के लिए व्रत रखती है। पत्नी,पति को यमराज से छुड़ा लाती है। पति को जीवनपथ में सहयोग देकर महान् बना देती है।

अहिल्याबाई के कारण खंडेराव के जीवन में महान् परिवर्तन आया था। वह न केवल राज-काज देखने लगा बल्कि कुशल योद्धा भी बन गया था। रणभूमि में जाता और सेना का नेतृत्व करता। युद्ध का संचालन करता और सैनिकों को प्रोत्साहित करता।

मल्हारराव एक बार अजमेर गये। साथ में खंडेराव व अहिल्याबाई भी थीं। मल्हारराव वहाँ चौथ वसूलना चाहते थे। चौथ एक तरह का कर था, जो मराठों द्वारा किसी भी राज्य से वसूल किया जाता था। उस समय राजस्थान में भरतपुर के आसपास जाटों का राज्य था। वहाँ का राजा था—सूरजमल जाट। वह कुम्भेर के दुर्ग में रहता था। यह दुर्ग डींग शहर के पास है। जाट लोग काफी वीर और साहसी होते हैं। वे अपने

आपको किसी से भी कम नहीं समझते। मल्हारराव का विचार था, ये लोग आसानी से चौथ दे देंगे। लेकिन वहाँ की प्रजा ने चौथ देने से साफ इनकार कर दिया। खंडेराव ने उन लोगों को समझाया—"आपकी भलाई इसी में है कि चौथ दे दें।"

"हमारा हित हम अच्छी तरह जानते हैं। जब तक हम जिन्दा हैं, तब तक कोई चौथ वसूल नहीं कर सकता। मर जाएंगे, तब वसूलने आ जाना।" जाटों ने स्पष्ट कह दिया। वे अड़ गए अपनी बात पर। टस से मस न हुए।

जाटों का निर्णय, मल्हारराव के लिए एक चुनौती था। इस चुनौती के जवाब में युद्ध की घोषणा कर दी गई।

मराठे और जाट दोनों ही लड़ाकू कौमें थीं। दोनों युद्ध के लिए तैयार हो गए। मराठा सेना ने कुम्भेर का किला घेर लिया। "हर-हर महादेव" के नारे आकाश में गूँज उठे। कई दिनों तक घमासान युद्ध होता रहा। मल्हारराव पीछे नहीं हटे। जाट भी डटे रहे।

राजा सूरजमल के दरबारी कवि थे—सूदन। इन्होंने "सुजन चरित" नामक ग्रन्थ लिखा है। इसमें मल्हारराव की वीरता का वर्णन इस प्रकार किया है—

"हारे देखि हाड़ा मन सारे कमधज बंस,
कूरम पसारे पायँ सुनत नगारे के।
केते पुर जोर केते नृपति संहारे,
तेई जोरि दल भारे, ब्रज भूमि में हंकारे के।।

अर्थात्—"बड़े-बड़े राजपूत राजा, जिसके भय से थर-थर कांपते थे। ऐसे प्रतापी मल्हारराव अनेकों शहरों को जलाते, कई राजाओं को मारते हुए बड़े भारी दल को लेकर ब्रजभूमि पर चढ़ आए------।"

अहिल्याबाई राजकाज तो करती थीं, वे ससुर व पति के साथ सरहिन्द, नवसार, आदि युद्धों में भी गईं थीं। युद्ध-क्षेत्र में

अहिल्याबाई गोला-बारूद, बन्दूक-तोप, और रसद की व्यवस्था करतीं। सेना को किस समय कौन-सी सामग्री की आवश्यकता होगी, इसका प्रबंध वे कुशलता पूर्वक करतीं। घोड़े पर बैठकर लड़ने में भी वे चतुर थीं। इस तरह युद्ध के संचालन तथा दाँव-पेंच का भी अच्छा अनुभव अहिल्याबाई को हो गया था।

रोज की तरह घमासान लड़ाई चल रही थी। जाट किले से बन्दूक की गोली, तोपों से गोले दाग रहे थे। मराठे किले को घेरे जाटों का मुकाबला कर रहे थे। खंडेराव किले के एक ओर सेना का संचालन कर रहे थे, तो दूसरी ओर मल्हारराव जीत के लिए जी जान से जुटे हुए थे। घोड़े पर सवार खंडेराव अपने सैनिकों को लड़ने के लिए उत्तेजित कर रहे थे। तभी दुश्मन की एक गोली उनके सीने में लगी। गोली लगते ही घोड़े की लगाम हाथ से छूट गई। खंडेराव धरती पर गिर पड़े।

देखते ही देखते खंडेराव के प्राण-पखेरू उड़ गए। वीर खंडेराव युद्ध-भूमि में वीरगति को प्राप्त हुए। मराठा सेना में कुहराम मच गया। दोनों पक्षों ने युद्ध बंद कर दिया।

एक सैनिक ने यह दुखद समाचार मल्हारराव को जाकर दिया। वीरगति पाए बेटे को देखकर, वे बच्चे की तरह रो पड़े। इकलौते बेटे की इस तरह की मौत से उनका कलेजा फट पड़ा। बार-बार पुत्र के मृत शरीर को हृदय से लगाते। बिलख-बिलख कर रोते रहे। पर कटे पक्षी की भांति, दुखी मल्हारराव की आँखों से आँसू थम नहीं रहे थे। सम्पूर्ण भारत में विजय का डंका बजाने वाले सूबेदार मल्हारराव, आँसू बहा रहे थे।

अहिल्याबाई ने जब यह अहसनीय, दुखद समाचार सुना, तो बेहोश हो गईं। काफी देर बाद बेहोशी टूटी। तब वे रोती-बिलखती पति के शव के पास आईं। उनका सुखी-जीवन समाप्त हो चुका था। दुख की काली घटा ने उन्हें घेर लिया। ये काली घटाएं, जीवन भर उन्हें घेरे रहीं। एक के बाद एक दुखद

घटना घटती रही। वे तड़प-तड़प कर विलाप कर उठतीं। बहू की करुण दशा देख कर, मल्हारराव हिम्मत कर उन्हें धैर्य बंधाने लगे। युद्ध भूमि में उपस्थित लोगों ने अहिल्याबाई को समझाने की कोशिश की। पति बिना सूना जीवन जीना, अहिल्याबाई ने ठीक नहीं समझा। मन ही मन कुछ निश्चय किया।

खंडेराव के अंतिम संस्कार की तैयारी की जाने लगी। तब अहिल्याबाई बोलीं—"मैं सती होऊंगी। पति के बिना जीना पाप है। जीवन भर साथ निभाने का वचन देकर भी जब वे नहीं रहे, तो मेरा जीवित रहना किस काम का?"

जीने की इच्छा ही सब दुखों की जननी है। मरने की तैयारी ही सब सुखों की जननी है। अहिल्याबाई इस बात को महसूस कर रही थीं। उन्होंने सती होने की तैयारी शुरू कर दी। उस समय समाज में सती प्रथा प्रचलित थी।जो पत्नी ,पति के साथ चिता पर अपना जीवन होम कर देती थी, लोगों की निगाह में वह देवी हो जाती थी।

मल्हारराव को जब यह सब मालूम पड़ा, तो वे और भी अधिक दुखी हुए। जवान बेटे की असमय मौत के सदमें के बाद, जवान बहू भी उन्हें बेसहारा कर रही है।

मल्हारराव रोते-बिलखते अहिल्याबाई के पास गए। अत्यंत करुणामय, दुखभरी वाणी में बोले—"बेटी तू सती होने का विचार छोड़ दे। खंडू तो बुढ़ापे में मुझे धोखा दे ही गया। अब तू ही मेरा बेटा है। तुझे देखकर ही बुढ़ापे के दिन काट लूँगा। फिर भी तू जीना नहीं चाहती है, तो पहले मुझे ही मर जाने दे।

बहू को समझाते हुए मल्हारराव बोले—"बेटी यह राज-पाट, धन-दौलत, सब तेरा है। यह सब मैं नहीं सँभाल सकूँगा। तुझे ही सँभालना पड़ेगा। अभी तक तू ही सारा काम देखती थी। तेरे बिना तो मैं बेजान हो जाऊँगा। तू रहेगी, तो मुझे हिम्मत रहेगी। अब तू ही मेरे लिए खंडू है। तुझे देखकर ही सारा दुख

भूल जाऊँगा। मेरी दशा तो आंधी में उखड़े पेड़ जैसी हो गई है। जिन्दगी के चंद दिन बाकी हैं। तू सती हो जाएगी तो मैं अंधा ही हो जाऊँगा। बेटी तू सती मत हो, तू तो सतियों से भी बढ़कर महासती है। अपनी प्रजा के लिए, बच्चों के लिए, इस बूढ़े बाप के लिए तू जिन्दा रह। सती होकर हम सबको अनाथ मत बना।''

यह कहकर, मल्हारराव फूट-फूट कर रोने लगे। ससुर मल्हारराव को बिन पानी के मछली की तरह तड़पते और बिलखते देखकर अहिल्याबाई का हृदय पसीज गया।

अहिल्याबाई ने सती होकर देवी कहलाने की अपेक्षा जीवित रहकर प्रजा की सेवा करना ठीक समझा। बुढ़ापे में ससुर को जवान बेटे की कमी महसूस न होने देने से बड़ा पुण्य और कौन-सा हो सकता था! अंत में अहिल्याबाई ने सती होने का विचार छोड़ दिया। वे स्वयं ज्ञानी थीं। उन्होंने सोचा कि मरने से जीवित रहता प्रजा के लिए श्रेष्ठ है। यह सही भी है कि जीवन पर किसी व्यक्ति का अपना अधिकार नहीं होता है। जीवन तो ''बहुजन हिताय'' होता है।

अहिल्याबाई के इस निश्चय से मल्हारराव को बहुत राहत मिली। उन्हें जीने का सहारा मिल गया।

वीरगति प्राप्त खंडेराव का अंतिम संस्कार, कुम्भेरी के किले के पास ही रणक्षेत्र में किया गया। बाद में उस स्थान पर अहिल्याबाई ने विशाल छत्री बनवाई। छत्री वह समाधि है, जो मृतकों की स्मृति में बनाई जाती है।

मानवता के नाते राजा सूरजमल ने खंडेराव के निधन पर गहन दुख प्रकट किया। उन्होंने मल्हारराव व मालेराव के लिए वस्त्र भेजे। खंडेराव की छत्री की व्यवस्था के लिए पन्द्रह हजार रुपये दिए। खंडेराव के निधन से दुखी होकर दिल्ली के मुगल बादशाह ने भी अपनी शोक संवेदना भेजी। उसने अहिल्याबाई और मालेराव को एक-एक परगना भेंट किया।

स्वयं के लिए सभी जीते हैं, अहिल्याबाई दूसरों के लिए जीवित रही। पति की मृत्यु के बाद उनका जीवन बिल्कुल बदल गया। उन्होंने राजसी सुखों का त्याग कर दिया। कीमती आभूषण-वस्त्रों को छोड़ सफेद वस्त्र पहनने लगीं। दुखी पीड़ितजनों की सेवा करना, उन्होंने अपने जीवन का परम लक्ष्य बना लिया।

5

बहू के नाम पत्र

मल्हारराव अपने राजमहल में बैठते। राज्य की व्यवस्था के बारे में सलाहकारों से विचार-विमर्श करते। अहिल्याबाई ऐसी चर्चाओं को ध्यान से सुनतीं। देश में घटित घटनाओं के बारे में सोचतीं। उनके प्रति वे सदा सतर्क रहतीं।

कुछ समय में राज्य संचालन में अहिल्याबाई निपुण हो गईं। उनकी कार्य-कुशलता से राज्य के कर्मचारी तथा प्रजा-जन प्रसन्न रहते। अहिल्याबाई की कार्य-कुशलता की कीर्ति व चर्चा पूना, हैदराबाद और दिल्ली तक पहुँची। वे अपने नाम से पत्रव्यवहार करने लगीं। उनकी आज्ञा का उल्लंघन करने की कोई हिम्मत नहीं कर पाता था। अहिल्याबाई के इन्हीं गुणों से मल्हारराव राजकाज की ओर से बेफिक्र हो गए थे। उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया था कि मेरे बाद, राज्य की देखभाल अहिल्याबाई ठीक तरह से कर सकेंगी। बाद में कई मामलों में वे अहिल्याबाई की सलाह भी लेने लगे थे। अहिल्याबाई यदि कोई सुझाव मल्हारराव के सामने रखतीं तो वे उस सुझाव को मान लेते थे। शासन-संचालन के साथ युद्ध-कला का ज्ञान भी अहिल्याबाई को प्रर्याप्त हो चुका था। वे स्वयं कई युद्धों में ससुर व पति के साथ गईं थीं।

अहिल्याबाई की उम्र अधिक नहीं थी, फिर भी मल्हारराव ने उन्हें कई बार तीर्थयात्रा पर भेजा। इससे देशाटन तो हुआ ही, साथ ही देश की भौगोलिक, राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक स्थिति का ज्ञान भी प्राप्त हुआ। अहिल्याबाई घोड़े पर बैठकर यात्रा करतीं। जहाँ भी जातीं, वहाँ के लोग उनसे मिलते। वे लोगों की हालत देखतीं। उनकी बाते सुनतीं और समझतीं। अहिल्याबाई को किताबी ज्ञान कम था। उन्होंने अनुभवों से काफी ज्ञान प्राप्त किया था।

मल्हारराव एक कुशल शिक्षक थे। अहिल्याबाई उनकी चतुर शिष्या थीं। कुशल शिक्षक की तरह मल्हारराव ने शासन संचालन कला का उन्हें अच्छा ज्ञान करा दिया था। इसका उपयोग वे जीवन भर करके सफलतापूर्वक राज्य करती रहीं। वे स्वयं लगान वसूलतीं, न्याय करतीं आदेश निकालतीं, और जनता के दुख-दर्दों को दूर करतीं।

मल्हारराव जब राज्य के बाहर होते थे, अहिल्याबाई को पत्र लिखकर राज-कार्य के आदेश देते। मार्गदर्शन व सलाह देते।

मल्हारराव द्वारा अहिल्याबाई को भेजे गये कुछ पत्र इस प्रकार थे–

प्रथम पत्र

––– मल्हारराव होलकर का अहिल्याबाई को आशीर्वाद। हम सब यहाँ कुशल हैं। तुम जो भी कार्य कर रही हो उनकी सूचना हमें दो। श्रीमंत पेशवा ने हमें सूचित किया है कि शंभूगिर गोस्वामी ने पिपरखेड़ा गांव के कुशाली पाटिल शिंदे के भतीजे की ज़मीन, खेत खलिहान, घर-बार ज़ब्त कर लिये हैं। श्रीमंत पेशवा का आदेश है कि गोस्वामी से पाटिल के भतीजे की ज़ब्त की गई चीजें वापस लौटा देवें--------

पाटिल का भतीजा अभी वफगांव में है। गोस्वामी ने पाटिल के आदमी और नौकरों को पिपरखेड़ा में पकड़ रखा है। उन सबको शीघ्र छोड़ दिया जाना चाहिए।

सरकारी आदेश निकालो कि यह सब काम शीघ्र पूरा किया जाए। और कुछ विशेष नहीं।

3 दिसम्बर 1762

द्वितीय पत्र

मल्हार राव का अहिल्याबाई को आशीर्वाद। हम सब यहाँ ठीक से कार्य कर रहे हैं। तुम क्या कर रही हो, सूचित करो। मैंने पहले लिखा था कि बिना रुके सीधे, शीघ्र ग्वालियर पहुँचो। वहाँ पाँच या सात दिन तक ठहरो। वहाँ जाने के बाद देखो कि एक हजार या पाँच सौ बड़ी तोपों के गोले और हो सके तो इतने ही छोटी बन्दूकों के गोले तैयार करवाओ। पसन्द करके सौ बड़े बर्तन खरीदो जिनमें तीरों के लिए एक-सेर का पाउडर समा सके। इस काम को न टालो। जब हम रवाना हुए थे तब तुम्हें छोटी तोपों की ओर ध्यान देने को कहा था। पहले नमूने के लिये गोले तैयार करो, फिर उन्हें बनाओ। हथियार के बनाने के लिए एक माह के खर्च की पूरी व्यवस्था रखो। इसके अलावा, कुछ विशेष नहीं।

आगरा, 3 जनवरी 1765

तृतीय पत्र

मल्हारराव का अहिल्याबाई को आशीर्वाद। मैंने रवाना होने के पहले तम्हें सूचित किया था कि मथुरा-आगरा में कहीं भी न रुकते हुए सीधे ग्वालियर पहुँचो। मुझे मालूम हुआ है कि तुम मथुरा में ठहरना चाहती हो। मैंने तुम्हें विशेष आदेश दिया था। उसकी परवाह न करते हुए तुम मथुरा में रुकना चाहती हो, वास्तव में यह ठीक नहीं है। यदि ऐसा ही करना है तो फिर तुम स्वतंत्र हो। आनंदपूर्वक तीर्थयात्रा कर सकती हो।

इस पत्र द्वारा आदेश देता हूँ कि एक बूंद पानी के लिए भी मथुरा में मत रुको। तेज रफ्तार से चम्बल पार करके जल्दी ग्वालियर पहुँचो। यदि उचित हो तो सुविधा के अनुसार वहाँ चार-पाँच दिन रुको। वहाँ ठीक तरह से युद्ध सामग्री जुटाओ।

छोटी तोपों और बन्दूकों के लिए गोले बनवाओ। अभी जहाँ भी हो, वहाँ से कहीं भी बीच में बिना रुके हुए सीधे ग्वालियर पहुँचो।

मैं समय-समय पर जैसा सूचित करूँ, उसी के अनुसार कार्य करो। ग्वालियर में एक बड़ा तोपखाना तैयार होना चाहिए। उसकी एक माह तक की पूर्ण व्यवस्था करके ही वह स्थान छोड़ो ।

आशीर्वाद ।

3 फरवरी 1765

चतुर्थ पत्र

बड़ी काली सिंध, 23 फरवरी 1765 ई. सन्। मालूम हो कि हम कुशल पूर्वक हैं। सूचित करो कि तुम सब कार्य ठीक ढंग से कर रही हो। पत्र शीघ्र देवें। तुमने लिखा है कि ग्वालियर में हथियार बनाने की उचित व्यवस्था नहीं होने के कारण उसे सिरोंज में बदल दिया है। ठीक है। उसे सिरोंज में ही रखो। बैलों के लिए घास और अनाज की उचित व्यवस्था रखो। सभी तोपों को वहीं रहने दो और तुम इन्दौर चली जाओ। तुम इन्दौर और सुल्तानपुर की तरफ पूरा ध्यान दो। हम अभी दिल्ली से रवाना हुए हैं। हम चाहते हैं कि हम संयुक्त प्रान्त से होते हुए बुन्देलखंड जावें। परिस्थिति के अनुसार हम बढ़ते जाएँगे। अधिक कुछ भी नहीं कहना है। आशीर्वाद।

ये सभी पत्र मराठी में लिखे गये थे। इनका हिन्दी में अनुवाद किया गया है।

इन पत्रों से कई बातों का पता चलता है। मल्हारराव कठोर व्यवहार के थे, फिर भी अहिल्याबाई के कार्यों की सदा सराहना करते थे। अहिल्याबाई युद्ध-सामग्री बनवाने में निपुण थीं। परिस्थिति के अनुसार वे काम करती थीं, जिसे मल्हारराव सहर्ष स्वीकार करते थे। वे मल्हारराव की सभी कार्यों में सहायता करती थीं।

6
विदा, युग निर्माता

दिल्ली से लगभग 100 किलोमीटर उत्तर में प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर है– पानीपत। पानीपत के मैदान पर तीन ऐतिहासिक युद्ध हुए हैं। पानीपत की पहली लड़ाई सन् 1526 में बाबर और इब्राहीम लोदी के बीच हुई थी। पानीपत की दूसरी लड़ाई सन् 1556 में अकबर और हेमू के मध्य हुई। इसमें अकबर की जीत हुई। पानीपत की तीसरी लड़ाई सन् 1761 में अहमदशाह अब्दाली और मराठों के बीच हुई थी। इस युद्ध में मराठे हार गए। हजारों मराठा सैनिक मारे गए। कहते हैं, मराठा राज्य का कोई ऐसा परिवार न था जिसका एक न एक सदस्य, पानीपत के युद्ध में काम न आया हो। मराठों की एक पीढ़ी इस युद्ध में समाप्त हो गई। मराठा शक्ति को ग्रहण लग गया। उत्तर भारत में कुछ समय के लिए मराठों की सत्ता समाप्त हो गई। मालवा के पुराने शासक मराठों को मालवा से खदेड़ना चाहते थे। दक्षिण में निजाम हैदराबाद ने मराठों का विरोध शुरू कर दिया। वह मराठों की कमजोर स्थिति का लाभ उठाना चाहता था।

मल्हारराव ने अपनी सूझ-बूझ, पराक्रम से उत्तर भारत में फिर मराठों की धाक जमा दी। मालवा के षडयंत्रकारी सरदारों

को ठिकाने लगा दिया। मराठा सेनापतियों के साथ मल्हारराव ने निजाम हैदराबाद को भी ठंडा कर दिया।

इस तरह मल्हारराव मराठा साम्राज्य के लिए भीष्म बन गये। फिर से सम्पूर्ण भारत में मराठों की तूती बोलने लगी। मल्हारराव काफी वृद्ध हो चुके थे। दिनरात युद्ध करते-करते बुरी तरह थक गए थे। जवान बेटे की मौत का गम भी कम नहीं था। उन्हें चाहिए था– आराम, और शांति।

इस बीच पूना के पेशवा का आदेश मिला– उत्तर भारत में जाओ। राघोबा पेशवा, महादजी सिंधिया, तुकोजीराव होलकर, व मालेराव के साथ मल्हारराव उत्तर भारत की यात्रा पर निकल पड़े। यही उनके जीवन की अंतिम यात्रा थी। रास्ते में उनकी तबीयत खराब हुई। ग्वालियर के पास आलमपुर नामक गाँव है। इसी गाँव में सभी को रुकना पड़ा। यह उनका अंतिम पड़ाव साबित हुआ।

मल्हारराव के कान में दर्द शुरू हुआ। काफी इलाज किया गया। दर्द-दूर नहीं हुआ। दर्द बढ़ता ही गया। मल्हारराव ने महसूस किया, अब मेरा आखरी समय आ गया है। अपने पौत्र मालेराव को बुलाकर कहा, "मेरे बाद तुम, श्रीमंत पेशवा की सेवा करना।" मालेराव का हाथ, तुकोजी व महादजी के हाथ में दिया, उसकी रक्षा, देखभाल का भार उन्हें सौंपकर, वे 26 मई 1766 को चिर निद्रा में सो गये।

फिरंगियों को हराने और अपने पुत्र की मृत्यु का बदला लेने की बात बाकी रह गई। अहिल्याबाई उस समय मालवा में ही थीं। मल्हारराव की मृत्यु का उन्हें व पेशवा को बहुत दुख हुआ। पति और सास के बाद ससुर का साया भी उठ गया।

होलकरराज का संस्थापक, मराठा साम्राज्य का भीष्म, दक्षिण भारत का आधार ही चल बसा। मल्हारराव पराक्रमी, शक्तिशाली और स्वामिभक्त सरदार थे। उनके बिना मराठा साम्राज्य जैसे पंगु ही हो गया।

पेशवा के दरबार में मल्हारराव का काफी मान-सम्मान था। पेशवा के प्रमुख विश्वासपात्र सरदारों में वे एक थे। मल्हारराव ने अपने अनेक रिश्तेदारों को अपने राज्य में उच्च पद दिए थे। उनके रिश्तेदारों में एक युवक था तुकोजीराव। इसका पालन पोषण उन्होंने अपने पुत्र के समान किया था। तुकोजी पर उन्हें काफी विश्वास हो गया था। उन्होंने उसे प्रमुख सरदार बना दिया था। तुकोजी भी मल्हारराव का सच्चा सेवक था। उनका बहुत सम्मान करता था। इसी कारण अंतिम समय मल्हारराव ने मालेराव का हाथ तुकोजी के हाथ में दे दिया था। तुकोजीराव आखरी समय तक होलकर राज्य की ईमानदारी से सेवा-सहायता करता रहा।

मल्हारराव का अंतिम संस्कार आलमपुर में ही किया गया। बाद में उसी स्थान पर अहिल्याबाई ने छत्री बनवाई। छत्री के लिए पेशवा ने 27,500 रुपये की मालगुजारी दी। साथ ही बेरछा परगने के 12 गाँव, दतिया के 3 और भंडारा से एक गाँव की सनद भी दी।

मल्हारराव श्रेष्ठ सेनानायक, घुड़सवार, योद्धा थे। तीर-तलवार, भाला चलाने में अत्यंत निपुण थे। वे वीर सैनिकों का भी बहुत सम्मान करते थे। पूना के पेशवा, दिल्ली के बादशाह, दक्षिण भारत के सूबेदार तक मल्हारराव का लोहा मानते थे। उनको सोना-चाँदी, हीरे जवाहरात भेंट में देते थे।

साधारण परिवार में जन्मे मल्हारराव, अपने पराक्रम, सूझबूझ और साहस के कारण मराठा साम्राज्य के ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारत के श्रेष्ठ सेना-नायक बन गए थे।

कवि खुशालीराम ने लिखा है—

"वीरो महान योधगणेषु मुख्यो।
बलाधिपः शस्त्रविधान सुज्ञः।।
सदा यशस्वी सततं समर्थो,
मल्लारिरावोविदितः पृथिव्याम्।।"

अर्थात् बड़े वीर, योद्धाओं में श्रेष्ठ,बलवानों के सरदार, शस्त्र विद्या में प्रवीण,यशस्वी और लगातार प्रयास करने वाले थे। वे दुनिया में मल्हारराव के नाम से प्रसिद्ध हुए।

मल्हारराव ने सन् 1741 में इन्दौर में खान नदी के निकट एक विशाल राजमहल बनवाया था जो कि "राजवाड़ा" कहलाता है, जिसमें होलकर राजाओं का दरबार लगता था। इन्दौर को विकसित करने के लिए उन्होंने बहुत प्रयास किये। उज्जैन तथा आसपास के क्षेत्र के व्यापारियों, व्यवसायियों और साहूकारों को बुलाकर इन्दौर में बसाया। उन्हें राज्य की ओर से संरक्षण और सहायता दी। इस कारण इन्दौर शीघ्र ही व्यवसायिक केन्द्र बन गया। आज तो इन्दौर छोटा बम्बई हो गया है।

एक और बज्रपात

मल्हारराव की मृत्यु के बाद उनका पौत्र मालेराव मालवा का सूबेदार बना। 23 अगस्त 1766 को वह होलकर की गद्दी पर बैठा। पूना से पेशवा की ओर से उसे सनद प्राप्त हुई। उस समय उसकी उम्र 21 वर्ष थी। उम्र के अनुसार उसका बोद्धिक विकास नहीं हुआ था। यह बात पेशवा जानते थे। अतः उन्होंने अहिल्याबाई को मालेराव का संरक्षक बना दिया।

मालेराव के आचरण ठीक नहीं थे। हमेशा नशे में धुत रहता। जानवर पालने का उसे बहुत शौक था। हाथी-घोड़े भारी तादाद में पाल रखे थे। हाथियों की क्रीड़ा देखने में उसे बहुत मजा आता था। होलकर राज्य की सूबेदारी मिलने के बाद तो वह और भी बिगड़ गया।

अहिल्याबाई बेटे की ऐसी हरकतें देखकर दुखी होतीं। उन्होंने उसे सही रास्ते पर लाने का बहुत प्रयास किया। वे चाहती थीं कि मालेराव अपने दादा मल्हारराव की तरह वीर, पराक्रमी और कुशल शासक बने। उसे समझाने के लिए अहिल्याबाई ने एक पत्र लिखा था, जो इस प्रकार है—

मुकाम चरोली, प्रान्त गोहद। चिरंजीव राजेश्री मालेराव को अहिल्याबाई का आशीर्वाद। हम यहाँ कुशल से हैं। कई दिनों से तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला, इससे मन दुखी रहता है। नियमित पत्र लिखते रहो। यह समय शोक करने का नहीं है। अपने चित्त को शांत करो। सूबेदारी का विचार कर; राज्य के काम काज में ध्यान देकर, जिस प्रकार तीर्थरूप (पवित्र)कैलाशवासी (स्वर्गीय) सूबेदार राज्य चलाते रहे, उसी तरह तुम भी राज्य का कार्य करो। मुझे पूरी आशा है, जिस तरह हमारे पूर्वजों ने कीर्ति प्राप्त की है, तुम उससे भी अधिक कीर्ति प्राप्त करो। इसी में तुम्हारी सफलता है। राजेश्री गंगाधर पंत तथा तात्या की इच्छा अनुसार कार्य करना। अधिक क्या लिखूँ। आशीर्वाद।

इस पत्र से ज्ञात होता है कि अहिल्याबाई को अपने पूर्वजों की कीर्ति पर गर्व था। साथ ही वे अपने कर्त्तव्यों तथा राज्य के कामकाज के प्रति बहुत सजग थीं। चिकने घड़े पर कभी पानी ठहरा है? मालेराव पर अहिल्याबाई के पत्र एवं सुझावों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। राजकाज की तरफ उसने कभी ध्यान नहीं दिया। अहिल्याबाई को ही सारा काम देखना पड़ता था।

अहिल्याबाई पूजा-पाठ करतीं। गरीबों और ब्राह्मणों को दान दक्षिणा देती रहतीं। मालेराव को यह सब पसन्द नहीं था। वह इसे धन की बर्बादी समझता था। वह प्रजा के साथ कठोर एवं निर्दयतापूर्वक व्यवहार करता। ब्राह्मणों को सताने में उसे अधिक आनन्द आता था। इस बारे में कई कहानियाँ प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि ब्राह्मणों को जो अन्न, मिठाई आदि दिये जाते उसमें वह सांप, बिच्छू रख देता था। जैसे ही वे लोग उसे उठाते उन्हें जहरीले कीड़े काट लेते। वे बेचारे दर्द से तड़प उठते। उनको तड़पते और चीखते देख कर मालेराव बहुत खुश होता था।

महेश्वर में एक जड़ी-बूटी बेचने वाला था। किसी कारण से मालेराव ने उसकी हत्या करवा दी। वह निर्दोष था। अहिल्याबाई को बहुत दुख हुआ कि ऐसी अन्यायी संतान को उन्होंने जन्म दिया। इससे तो अच्छा होता, ऐसी संतान होती ही नहीं। राजा प्रजा का रक्षक होता है। रक्षक ही भक्षक बन बैठा था। मालेराव नित्य नया अत्याचार करता। प्रजा अत्यन्त दुखी हो गई।

और एक दिन---

अहिल्याबाई ने आदेश दिया--मालेराव को हाथी से कुचलवा दिया जाए। वह राज्य करने योग्य नहीं है। कुल का कलंक है। अधिकारियों ने मालेराव को हाथी के पैरों तले कुचलवा दिया। इस घटना से अहिल्याबाई पर बहुत कठोर मानसिक आघात हुआ। वे इतनी दुखी हुईं कि सब कुछ छोड़ कर, एकांतवास करने का विचार किया। पर शीघ्र ही अपनी प्रजा का ध्यान आया और अपने कर्त्तव्य का बोध हुआ, जैसे ससुर मल्हारराव के कहने से सती होने का विचार छोड़कर राजकाज में लगी थीं, फिर से वैसा ही जहर का घूँट पीकर, आँसू पोंछकर, धीरज, साहस और हिम्मत जुटाकर, कर्त्तव्य-कर्म में जुट गईं।

बचपन में धर्म ग्रन्थों से जो शिक्षा मिली थी उसका सही अर्थ अब उन्हें ज्ञात हुआ। "तुम्हारा कर्म में ही अधिकार है फल में नहीं", गीता का यह सन्देश शेष जीवन का आधार बन गया।

7

नई राजधानी महेश्वर

पति,ससुर फिर पुत्र की मृत्यु से अहिल्याबाई का धैर्य डगमगा गया था और जीवन भार स्वरूप लगने लगा था। लेकिन वे कर्त्तव्य योजना से विचलित नहीं हुईं। इन्दौर से राजधानी बदलने की बात अहिल्याबाई सोचने लगीं। राजधानी के लिए उपयुक्त कई स्थानों का निरीक्षण किया गया। अंत में, नर्मदा के किनारे, महेश्वर नगर उन्हें ठीक लगा।

नर्मदा नदी देश के मध्य भाग की जीवन-रेखा कही जाती है। पुराने समय से नर्मदा, उत्तर व दक्षिण भारत की सीमा-रेखा कही जाती रही है। नर्मदा अमर कंटक पहाड़ से निकलती है। गुजरात प्रदेश के भड़ोंच शहर के पास अरब सागर में समा जाती है। देश की प्राचीन संस्कृति का विकास नर्मदा घाटी में हुआ था। नर्मदा के निकट हुई खुदाई में ऐतिहासिक महत्त्व की सामग्री मिली है।

देश की सात पवित्र नदियों में से नर्मदा एक है। नर्मदा के पानी को वैज्ञानिक उत्तम मानते हैं। कुछ लोग तो नर्मदा की परिक्रमा भी करते हैं। कहा जाता है,अन्य नदियों में नहाने से पा' नष्ट होते हैं, नर्मदा के दर्शन मात्र से ही पाप समाप्त हो जाते हैं। मांडू में रानी रुपमती का महल है। रानी रुपमती

प्रतिदिन प्रातः अपने महल से नर्मदा के दर्शन करके ही अन्न-जल ग्रहण करती थी।

नर्मदा के तट पर कई प्रसिद्ध तीर्थ-स्थल हैं। कई जल प्रपात हैं, जैसे कपिल-धारा, दूध-धारा, सहस्र-धारा और धुंआधार आदि। नर्मदा का हर कंकर है शंकर। अहिल्याबाई भगवान शंकर की परम भक्त थीं। जीवन भर वे नर्मदा के तट पर स्थित महेश्वर में ही रहीं।

महेश्वर इन्दौर से 90 कि.मी. दूर खरगोन जिले में है। खरगोन तक होलकरों का ही राज्य था। अहिल्याबाई ने इन्दौर से राजधानी हटाकर महेश्वर में स्थापित की।

महेश्वर धार्मिक एवं ऐतिहासिक महत्व की नगरी है। इसका पुराना नाम माहिष्मती था। हरिवंश पुराण में लिखा है, इस नगर को राजा महिष्मान ने बसाया था। आदि शंकराचार्य और मंडन मिश्र के मध्य शास्त्रार्थ भी यहीं हुआ। चीनी यात्री ह्वेंसाँग यहाँ आया था। अपने यात्रा वर्णन में उसने इसका नाम "मोहिश फलो-फुलो" लिखा है।

इतिहास के अनुसार महेश्वर में हैहय, चालुक्य एवं परमार वंशों का राज्य रहा। मांडू और गुजरात के सुल्तानों तथा मुगल बादशाहों का भी महेश्वर पर अधिकार रहा। सन् 1730 में मल्हारराव ने व्यापारियों, बुनकरों और कारीगरों, को जमीन-जायदाद, मकान आदि की सुविधा देकर बसाया था ।

महेश्वर अहिल्याबाई को बहुत प्रिय था। यहाँ पर नर्मदा का पाट काफी चौड़ा है। यहाँ पानी बहुत गहरा है। हमेशा अथाह जल-राशि बनीं रहती है। यहाँ का प्राकृतिक दृश्य अति सुन्दर है। महेश्वर से लगभग 3 किमी. दक्षिण की ओर सहस्र धारा का सुन्दर जलप्रपात है।

अहिल्याबाई ने कई पुराने मंदिरों का जीर्णोद्धार कराया था। कई नए मंदिर भी बनवाए थे। पक्के घाट बनवाए थे। नर्मदा के तट पर ही अहिल्याबाई ने अपना विशाल महल बनवाया। वहीं

वे रहती थीं, दरबार लगाती थीं और राजकाज करती थीं। महेश्वर में अहिल्याबाई ने अनेक मकान बनवाकर ब्राह्मणों, विद्वानों और बुनकरों को भेंट किए थे। महेश्वर के साड़ी उद्योग को अहिल्याबाई ने प्रोत्साहन दिया। यहाँ की बनी "महेश्वरी" साड़ियाँ देश-विदेश में लोकप्रिय हुईं। आज भी महेश्वर की साड़ियाँ सारे देश में प्रसिद्ध हैं।

होलकर राज्य की राजधानी बन जाने से महेश्वर का महत्व और भी बढ़ गया था। पुराने समय से महेश्वर का भौगोलिक महत्व रहा है। उत्तर से दक्षिण भारत में जाने वाले राजमार्ग के मध्य में स्थित होने के कारण, महेश्वर का राजनीतिक, सामाजिक, व्यावसायिक और धार्मिक महत्त्व सदा रहा है।

उस समय महाराष्ट्र का प्रसिद्ध लोकगीत (लावणी) का गायक था– अनन्त फंदी। अहिल्याबाई के दर्शनों के लिए वह एक बार महेश्वर आया था। उसने महेश्वर का सुन्दर वर्णन किया है, जो इस प्रकार है:

"महेश्वर नर्मदा के तट पर बसा है। यहाँ कई घाट और अनेक विशाल मंदिर हैं। यहाँ नर्मदा बहुत गहरी है, इस कारण कैलाश के समान सुन्दर लगता है। यहाँ सुन्दर-सुन्दर भवन, हवेलियाँ तथा घर हैं। अहिल्याबाई के दर्शन के लिए, उनसे पुरस्कार, भेंट-दान प्राप्ति की आशा से कई लोग महेश्वर आते हैं। महेश्वर में अपार धन-सम्पत्ति है। शहर बहुत सुन्दर बसा है। बड़े-बड़े बाजार, दुकानें हैं। शहर में कई धनी सेठ-साहूकार हैं। यहाँ वस्तुएँ बहुत सस्ती मिलती हैं।"

अहिल्याबाई के कारण ही महेश्वर की महिमा में चार-चाँद लग गए थे। राजधानी होने के कारण, महेश्वर भव्य-विशाल नगर हो गया था, जहाँ विद्वानों, ब्राह्मणों, व्यापारियों, राजदूतों और यात्रियों का जमघट सदा बना रहता था। यह आज भी भव्य है । घाट पर खड़े होकर तनिक निहारो नर्मदा की ओर, तनमन पुलकित हो जाता है । मन कहता है कि स्नान करें, नाव में बैठें, पैदल ही पैदल तट के पत्थरों पर चलें।

चुनौती का मुकाबला

मालेराव के कोई संतान न थी। उसके बाद होलकर राज्य का कोई उत्तराधिकारी नहीं रहा। यह देखकर स्वार्थी लोगों ने एक चाल चली। अहिल्याबाई के खिलाफ षड्यंत्र रचा। उनमें एक था– गंगाधर यशवन्त चन्द्रचूड़– होलकर राज्य का पुराना व विश्वासपात्र अधिकारी। दूसरे थे– पूना के दादा राघोवा पेशवा। विश्वासघाती गंगाधर चन्द्रचूड़ ने अहिल्याबाई को सलाह दी– "वे भगवद् भजन करें और किसी बच्चे को गोद ले लें। राज्य का कामकाज देखने के लिए हम जो हैं।"

इसका अर्थ साफ था। स्वार्थी लोगों को मनमानी करने का मौका मिल जाए, अहिल्याबाई के हाथ में कोई अधिकार नहीं रहें। वे उनके हाथों की कठपुतली बन जाएँ।

अहिल्याबाई विदुषी थीं। वे कुटिल हमदर्द व्यक्तियों की चाल समझ गईं। उन्होंने सूझबूझ और धीरज से काम लिया। उनका मत था– "राजा प्रजा का रक्षक होता है। प्रजा की भलाई में ही उसकी भलाई है। ऐसी स्थिति में मुझे स्वयं राज्य की बागडोर संभालनी चाहिए।"

अहिल्याबाई ने अपने विश्वासपात्र व्यक्तियों से कहा– "यह राज्य मेरे पूर्वजों ने खूनपसीना बहाकर कायम किया है। यह राज्य, यह भूमि, यह धन-सम्पत्ति, उन्होंने अपनी बुद्धि, शक्ति, और साहस से प्राप्त की है। अपनी तलवार की धार से खून बहाकर राज्य की नींव पुख्ता की है। जिन लोगों ने इस राज्य की नींव डाली है, उनमें से एक की मैं बहू हूँ, एक की पत्नी हूँ और एक की माँ हूँ।"

इस कारण इस राज्य को सुरक्षित रखना मेरा कर्त्तव्य ही नहीं, अधिकार भी है। इसकी रक्षा करते हुए, प्रजा की सेवा करना ही मेरा धर्म है। इस राज्य के ध्वज की मुझे रक्षा करनी है।

अहिल्याबाई पुत्र की मृत्यु से बहुत दुखी हो गईं थीं। सब कुछ छोड़कर हिमालय क्षेत्र में शेष जीवन बिताना चाहती थीं । किन्तु स्वर्गीय मल्हारराव के वचन तथा गीतापाठ की याद आते ही, कर्त्तव्य बोध के कारण वे रुक गईं । उन्हें ससुर के वचन याद थे,"इस राज्य को तुम्हें ही सम्हालना होगा। प्रजा का पालन करना होगा। प्रजा के लिए तू जिन्दा रह, सती होकर सबको अनाथ मत बना।" मल्हारराव के जीवनकाल से मृत्यु तक वे राज्य का कार्य करके, प्रजा की सेवा करती रही थीं।

सन् 1767 में अहिल्याबाई ने होलकर राज्य की बागडोर अपने हाथ में लेने की घोषणा की। इससे प्रजा को संतोष हुआ। वह अहिल्याबाई के वात्सल्य, प्रेम, सेवाभाव, न्याय, दया, धर्म के आचरण से परिचित थी। दूसरी ओर अहिल्याबाई की इस घोषणा से षड्यंत्रकारी बौखला उठे। उनका कहना था– "हम जैसे लोगों के होते हुए एक निःसहाय, विवश और विधवा महिला कैसे राज्य चला सकती है? ऐसा कभी नहीं हो सकता। अहिल्याबाई तो एक अबला है। उसे अपनी मर्यादा में रहना चाहिए। राजकाज का काम पुरुषों का है। उनका इतना साहस कि हमारा कहना न माने। उनके इस अभिमान को चूर-चूर कर देंगे।"

गंगाधर चन्द्रचूड़ ने दादा राघोवा पेशवा को पत्र लिखा– "होलकर राज्य का कोई राजा नहीं है। राज्य हड़पने व हथियाने का अचूक मौका है। शीघ्र आओ।"

पत्र पढ़ते ही, दादा राघोवा के मुँह में पानी आ गया। उन्होंने सोचा– अहिल्याबाई एक अबला है। पुत्र-शोक में डूबी हुई है। ऐसा मौका फिर हाथ नहीं आएगा। दादा राघोवा ने विशाल सेना तैयार की। होलकर राज्य पर अधिकर करने के लिए पूना से कूच कर दिया।

अहिल्याबाई को गंगाधर के षड्यंत्र का पता चल गया। विकट स्थिति को देखते हुए, अहिल्याबाई ने दूरदर्शिता से काम

लिया। पुत्र-शोक होते हुए भी राज्य की स्थिति संभालने में जुट गई। उन्होंने कहा— "मैं एक विधवा हूँ, असहाय अबला हूँ, ऐसा कोई न समझे। यदि मैं हाथ में भाला लेकर निकल पड़ी तो एक भी जिन्दा नहीं बचेगा। मैं अपने ससुर के अनुसार ही पूना के पेशवा के अधीन हूँ। किसी ने मेरे राज्य पर हाथ बढ़ाया, तो उसकी खैर नहीं है।"

अहिल्याबाई ने अपने विश्वासपात्र सेनापति तुकोजीराव को बुला सारी स्थिति पर गंभीरता से विचार किया। पूना के प्रधान पेशवा माधव राव को इस षड्यंत्र की सूचना भेजी गई। साथ ही गायकवाड़, भौंसले दाभाडे, पंवार, महादजी शिन्दे को गुप्त संदेश भेजे गये। सभी ने अहिल्याबाई का पक्ष लिया। पूरी मदद देने का आश्वासन दिया।

बाहर की नाकेबंदी करने के बाद, अहिल्याबाई ने अपनी सेना के अधिकारियों और गांवों के मुखियों को बुलाकर, एक बड़ा दरबार किया। सभी ने तय किया— "दादा राघोबा, हमारे राज्य में कदम रखे तो उनको खदेड़ दिया जाए। ईंट का जवाब पत्थर से दिया जाए। षड्यंत्रकारियों को ऐसी मात दी जाए कि फिर किसी की होलकर राज्य पर निगाहें उठाने की हिम्मत न हो।"

राज्य का जनमत अहिल्याबाई के पक्ष में था। उन्होंने सैनिक तैयारी शुरू कर दी। हथियार, बन्दूक, तोप, गोला-बारूद, रसद आदि सामग्री जुटाई जाने लगी।

अहिल्याबाई ने एक और काम किया। महिलाओं की सेना तैयार की। महिला सैनिकों को स्वयं उन्होंने हथियार चलाना सिखाया। युद्ध व रण-व्यूह का प्रशिक्षण दिया। अहिल्याबाई की सेना में अत्यन्त उत्साह था। प्रजा भी नहीं चाहती थी कि अहिल्याबाई के होते हुए कोई और मालवा पर अधिकार करे। वह तो अपना सब कुछ बलिदान करने को तैयार थी।

दादा राघोबा, होलकर राज्य हड़पने के लिए सेना सहित

उज्जैन पहुँचा। उज्जैन के निकट बहती है, क्षिप्रा नदी। इसी के तट पर दादा राघोबा ने अपना पड़ाव डाला।

अहिल्याबाई को जब यह मालूम पड़ा, तो उन्होंने अत्यंत चतुराई और सूझ-बूझ का परिचय दिया। अपने सेनापति तुकोजीराव को सेना सहित उज्जैन भेजा। क्षिप्रा नदी के एक तट पर अहिल्याबाई की सेना थी दूसरी ओर दादा राघोबा की सेना। सेनापति तुकोजीराव ने दादा राघोबा के पास संदेश भिजवाया सोच-समझकर आगे कदम बढ़ाएँ, अगर क्षिप्रा पार की तो हमारी सेना तुम्हारे सैनिकों को गाजर-मूली की तरह काट कर कच्चा चबा जायेगी।

दादा राघोबा को ऐसी स्थिति की आशा नहीं थी। अपने गुप्तचरों से उन्हें मालूम पड़ा कि अहिल्याबाई ने युद्ध की जोरदार तैयारी की है। सेना और प्रजा में काफी उत्साह है।

तभी अहिल्याबाई का साहस भरा पत्र दादा राघोबा को मिला। पत्र में लिखा था— ''आप मेरा राज्य हड़पने आए हैं। यह आपको शोभा नहीं देता। आप एक नारी के साथ युद्ध मत कीजिए। नहीं तो जो कलंक आपको लगेगा वह कभी मिट नहीं सकेगा। मैं एक अबला हूँ। मैं एक असहाय नारी हूँ यह समझ कर आप आए हैं, तो इस बात का पता तो युद्ध भूमि में चलेगा। मैं एक स्त्री हूँ। युद्ध में हार भी गई तो मुझे कोई याद नहीं रखेगा। आप युद्ध में हारे तो जग में आपकी ही हँसी होगी। मैं अपनी महिला सेना के साथ युद्ध-भूमि में आपका मुकाबला करूँगी। इन सभी बातों को सोच समझकर युद्ध का बिगुल बजाएँ। आपका भला इसी में है, जैसे आए हैं वैसे ही चुपचाप वापिस चले जाएँ।''

अहिल्याबाई का संदेश पढ़कर दादा राघोधा के पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई। अहिल्याबाई की धमकी, विशाल सेना, महिला सेना और जोरदार युद्ध की तैयारी से उनके हौसले पस्त हो गए । अपनी हार आँखों के सामने दिखाई देने लगी ।

दादा ने गिरगिट की भांति रंग बदला। अहिल्याबाई को संदेश भिजवाया– "मैं न तो आपका राज्य हड़पने आया हूँ न आपसे युद्ध करने। मैं तो आपके इकलौते बेटे मालेराव की मृत्यु का समाचार सुनकर, शोक प्रकट करने आ रहा था। आपने मुझे गलत समझा है। मेरे प्रति गलत धारणा बना ली है।"

राघोबा का सपना चूर-चूर हो गया। कल्पना का महल ढह गया। सोचा क्या था? और हो गया उल्टा ही। वे बाजी हार गए। बिना खून-खराबे के ही बुरी तरह मात खाई।

अहिल्याबाई ने जवाब भिजवाया– "संवेदना प्रकट करने के लिए इतनी बड़ी सेना लेकर आने की क्या जरूरत थी? सैनिकों को नाहक कष्ट दिया। यह बात हमें समझ में नहीं आई। आप पालकी पर बैठकर आइए। आपका स्वागत है।"

दादा राघोबा अपने कुछ सरदारों के साथ इन्दौर आए। अहिल्याबाई से मिले। अहिल्याबाई ने उनका उचित आदर-सत्कार किया, मान-सम्मान दिया। दोनों में परस्पर आदर व राजकीय मर्यादा में भेंट-वार्ता हुई। मन का मैल दूर हो गया। दादा राघोबा समझ गए अहिल्याबाई कोई साधारण स्त्री नहीं है। आनंद पूर्वक कई दिन तक इन्दौर में रहे, फिर उज्जैन होते हुए पूना लौट गए।

घर का भेदी गंगाधर चंद्रचूड़ भी लज्जा के कारण तीर्थ यात्रा का बहाना बना कर इन्दौर से चल पड़ा।

इस घटना से अहिल्याबाई का मान और भी बढ़ गया। उनके यश की पताका और भी ऊँचाई छूने लगी।

8

बेटी का विवाह

अहिल्याबाई ने जब राज सत्ता संभाली थी, उस समय राज्य में चोर, डाकुओं, लुटेरों का बहुत आतंक था। जनता, सेठ-साहूकार, व्यापारी दुखी थे । रोज अहिल्याबाई के पास चोर-डाकुओं के कारनामों की शिकायतें आती थीं। इनसे उनको बड़ा दुख होता। प्रजा के दुखों को दूर करने के उन्होंने भरसक प्रयास किए लेकिन डाकू-समस्या का हल नहीं निकला।

अहिल्याबाई ने महेश्वर में एक बड़ा दरबार किया। इसमें प्रमुख सरदारों, सैनिक अधिकारियों, सैनिकों, गाँवों के मुखियाओं तथा नागरिकों को बुलाया। डाकू समस्या समाप्त करने की बात रखी गई। परस्पर गंभीर विचार-विमर्श हुआ लेकिन संतोषजनक नतीजा नहीं निकल पाया।

अहिल्याबाई काफी देर तक शांत,चुप-चाप बैठी रहीं। गंभीर विचारों में डूबी रहीं। कुछ देर बाद उन्होंने दरबार में घोषणा की– "जो मेरे राज्य में, चोर-डाकुओं का आतंक समाप्त कर देगा, उसके साथ मैं अपनी एकमात्र बेटी, मुक्ताबाई का विवाह कर दूँगी। वह वीर चाहे जो भी हो।"

यह एक साहस भरी चुनौती थी। क्रांतिकारी कदम था। एक तीर से दो शिकार की बात थी। दरबार में एकदम सन्नाटा छा

गया। लोग एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। डाकुओं का सफाया जोखम भरा काम था। कौन अपने को खतरे में डाले? जानबूझकर कौन मौत के मुँह में जाए?

तभी एक सुन्दर, बलवान युवक खड़ा हुआ। आगे बढ़ा। हाथ जोड़कर बोला— "यह काम मैं करूँगा। होलकर राज्य को चोर-डाकुओं के आतंक से मुक्त करूँगा। मुझे राज्य की ओर से पर्याप्त धन और सेना चाहिए।"

सभी लोग उस युवक की ओर देखने लगे।वह साहसी युवक था— यशवन्तराव फणसे। अहिल्याबाई बहुत खुश हुईं। उन्होंने उसकी मांग स्वीकार कर ली। शीघ्र ही सारी व्यवस्था कर दी गई। यशवन्तराव फणसे साहसी और बुद्धिमान योद्धा था। कुछ समय में ही उसने चोर-डाकुओं का सफाया कर दिया। प्रजा ने राहत की सांस ली। अहिल्याबाई अपनी प्रजा को सदा सुखी देखना चाहती थीं। प्रजा के दुख को अपना दुख समझती थीं।

अपनी घोषणा के अनुसार, अहिल्याबाई ने मुक्ताबाई का विवाह यशवन्तराव फणसे के साथ बड़ी धूमधाम से कर दिया। बेटी को काफी धन-दौलत दी। दहेज में तराना का परगना भी दिया।

यशवन्तराव को आशीष देते हुए अहिल्याबाई ने कहा— "बेटा,आज से मुक्ता तुम्हारी धर्म पत्नी हुई। अब यह तुम्हारे सहारे है। तुम इसे सदा अपने साथ रखना। इसकी रक्षा करना।

"बहुत ही लाड़-प्यार में यह पली है। कभी ऐसा कुछ मत करना, जिससे इसे दुख हो। इसे सदा खुश रखना।

"गृहस्थी भी एक गाड़ी है। स्त्री और पुरुष इसके दो पहिए हैं। दोनों में अटूट प्रेम, सहायता-सहयोग, सेवा की भावना हो। एक दूसरे के प्रति त्याग के भाव हों तो गृहस्थी की गाड़ी चल सकती है। दोनों में एक भी कमजोर हो तो गृहस्थी गड़बड़ा

जाती है। तुम दोनों का गृहस्थ जीवन सुखी हो।''

अहिल्याबाई ने अपनी प्यारी बेटी को गले लगाया। दोनों की आँखें आँसुओं से भर आईं। बेटी को विदाई देते हुए अहिल्याबाई ने सीख दी– ''बेटी, आज तुम माता-पिता का घर छोड़कर अपने घर जा रही हो। पति ही तुम्हारे लिए प्रभु हैं। उनकी सदा सेवा करना। आज्ञा मानना, वे सदैव संतुष्ट रहें। कभी ऐसी बात मत कहना जिससे पति के मन को चोट पहुँचे। नारी जीवन की सफलता इसी में है कि वह अपनी मधुर वाणी और सद्व्यवहार से घर के लोगों का मन जीत ले।

''खुशी-खुशी अपने घर जाओ। भगवान तुम दोनों को सदा सुखी रखे।''

इन वचनों के साथ अहिल्याबाई ने बेटी को विदा किया।

9

विद्रोहियों का दमन

मल्हारराव होलकर की धाक सारे उत्तर भारत में थी। कई राजा उनका नाम सुनते ही काँप उठते थे। उस समय जयपुर के राजा थे– सवाई जयसिंह। इनके दो बेटे थे– माधवसिंह तथा ईश्वरीसिंह। माधवसिंह बड़ा था। वह अपने मामा संग्रामसिंह के पास उदयपुर में रहता था। मामा ने उसे रामपुरा ग्राम की जागीर दे रखी थी। जयसिंह की मृत्यु के समय भी माधवसिंह उदयपुर में था। ईश्वरीसिंह छोटा भाई होते हुए भी जयपुर की गद्दी पर बैठ गया।

ऐसी स्थिति में माधवसिंह ने मल्हारराव होलकर से मदद माँगी। मल्हारराव ने महसूस किया कि जयपुर की गद्दी का वास्तविक हकदार माधवसिंह ही है। इसलिए उन्होंने उसका पक्ष लिया। मल्हारराव ने ईश्वरीसिंह को पत्र लिखा-जयपुर का राज्य माधवसिंह को दे दो या युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।

ईश्वरीसिंह मल्हारराव का पत्र पढ़कर बहुत ही भयभीत हो गया। उसने जहर खाकर आत्म हत्या कर ली। माधवसिंह जयपुर की गद्दी पर बैठा। उसने मल्हारराव को निश्चित राशि दी। साथ ही "रामपुरा" ग्राम भी दे दिया लेकिन यह उदयपुर राज्य में था।

इस कारण उदयपुर का राजा जगतसिंह और रामपुरा के सरदार चन्द्रावत माधवसिंह से नाराज हो गये। चन्द्रावतों को होलकरों के अधीन रहना जरा भी अच्छा नहीं लगा। वे बहुत दुखी थे। लेकिन कुछ कर नहीं सकते थे। मल्हारराव का सामना करने की उनमें हिम्मत व शक्ति नहीं थी। मल्हारराव के जीवित रहते चन्द्रावत चुप रहे। उनके मरने के बाद अहिल्याबाई ने होलकर राज्य की बागडोर संभाली। चन्द्रावतों ने अहिल्याबाई को साधारण नारी समझा। होलकर राज्य से स्वाधीन होने के लिए सन् 1768 में विद्रोह कर दिया।

अहिल्याबाई के पास इस समय पर्याप्त सैनिक तैयारी नहीं थी। उनका सेनापति तुकोजीराव होलकर उत्तर भारत में युद्ध कर रहा था। ऐसी स्थिति में अहिल्याबाई ने एक कुशल प्रशासक की तरह दूरदर्शिता से काम किया। विद्रोही चन्द्रावतों से समझौता कर लिया। इसके अनुसार उन्हें 31 गाँव दे दिए। इससे चन्द्रावत चुप हो गए। बिना खून-खराबे के अहिल्याबाई ने चन्द्रावतों के पहले विद्रोह को समाप्त कर दिया।

रस्सी जल जाती है पर उसका बल नहीं जाता। चन्द्रावतों की इच्छा पूरी नहीं हुई थी। वे चुपचाप नहीं बैठे। सन् 1783 में उन्होंने फिर विद्रोह किया। अहिल्याबाई ने सेना भेजकर विद्रोह दबा दिया। चन्द्रावतों से सामान्य शर्तों पर समझौता कर लिया। अहिल्याबाई ने चन्द्रावतों से उदारता का व्यवहार करके मित्र बनाने की नीति अपनाई।

अहिल्याबाई की उदारता का चन्द्रावतों ने गलत अर्थ लगाया। वे समझे, अहिल्याबाई एक स्त्री है, युद्ध से डरती है और उसके पास बड़ी सेना भी नहीं है। चन्द्रावतों ने होलकर राज्य से मुक्त होने के लिये सैन्य तैयारी शुरू कर दी और मौके की तलाश करने लगे।

कहा जाता है साँप को घायल करके छोड़ दो तो वह बदला लेता है। सयाने लोग साँप का फन कुचलकर जला देते हैं। इससे

दुबारा हमले का डर नहीं रहता। अहिल्याबाई ने चन्द्रावतों को पूरी तरह कुचला नहीं था। उनसे मित्रता कर ली थी। इसीलिए वे पुन: हमले की तैयारी कर रहे थे।

सन् 1787 में राजपूत राजाओं ने सिंधिया को हरा दिया और होलकरों की "जावद" रियासत पर भी कब्जा कर लिया। इससे चन्द्रावतों का हौसला बढ़ गया। वे तो ऐसे मौके की तलाश में ही थे। राजपूतों से मित्रता करके उन्होंने होलकर राज्य के विरुद्ध विद्रोह का बिगुल बजा दिया। राजपूतों और चन्द्रावतों की सेना राज्य पर आक्रमण के लिए आगे बढ़ी।

अहिल्याबाई ने इस घटना की सूचना मिलते ही अपनी सेना मोर्चे पर भेजी। युद्ध का संचालन स्वयं संभाला। सेना में सैनिकों की भर्ती की जाने लगी और तेजी से हथियार बनाए जाने लगे। राजपूतों और चन्द्रावतों की सेना का होलकर सेना से मन्दसौर के निकट मुकाबला हुआ। घमासान युद्ध हुआ। दोनों ओर के हजारों सैनिक मारे गए। राजपूत सेना मैदान छोड़कर भाग गई। चन्द्रावतों ने भाग कर "आमद" के किले में शरण ली। होलकर सेना ने रामपुरा को जीत लिया और आमद के किले की ओर बढ़ी। होलकर सेना में "ज्वाला" नाम की प्रसिद्ध तोप थी। इसके भयंकर गोलों ने शत्रु की कमर तोड़ दी। आमद के किले में रखी बारूद में आग लग गई। सैकड़ों सैनिक जलकर मर गए। चन्द्रावतों का सरदार सौभागसिंह पकड़ा गया। अहिल्याबाई ने उसे तोप से उड़वा दिया। अहिल्याबाई ने कठोरता से चन्द्रावतों को कुचल दिया। सभी विद्रोही उनकी शरण में आ गए। रामपुरा में अपना अधिकारी नियुक्त कर दिया।

इस विजय से अहिल्याबाई की प्रसिद्धि और बढ़ गई। वे देश की श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ व कुशल प्रशासक के रूप में जानी जाने लगीं। इस विजय की खुशी में पूना में बड़ा विजयोत्सव मनाया गया। अहिल्याबाई के सम्मान में तोपें दागी गईं। पूना दरबार

में नाना फड़नवीस ने कहा– "अभी तक हम अहिल्याबाई की दान-धर्म, पूजा-पाठ की बातें ही सुनते थे, पर आज उनकी शूर-वीरता का भी परिचय मिल गया। आज हम जान गए कि पूना का पुण्यद्वार नर्मदा तट पर बसा– महेश्वर ही है।"

अहिल्याबाई शांति प्रिय थीं। उन्होंने अपने राज्य का विस्तार करने के लिए किसी दूसरे राज्य पर आक्रमण नहीं किया। जिसने भी उनका विरोध किया उन्होंने उसका ही वीरतापूर्वक दमन किया।

परिवार में अंधेरा

यशवन्तराव फणसे और मुक्ताबाई आनन्द से रहने लगे। दोनों में बहुत प्रेम था कुछ वर्षों बाद मुक्ताबाई ने एक पुत्र को जन्म दिया। राज्य में खुशी छा गई। अहिल्याबाई को अपार प्रसन्नता हुई। बालक का नाम रखा गया– नथ्या।

अहिल्याबाई नथ्या से बहुत ही स्नेह करतीं। लाड़-प्यार से पालन पोषण करतीं। हमेशा अपने पास रखतीं। वे उसे अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहती थीं।

नथ्या बहुत कमजोर था। हमेशा बीमार रहता। वह सोलह वर्ष की आयु में बहुत बीमार हो गया। भरपूर इलाज कराया गया। कोई फायदा नहीं हुआ। बीमारी बढ़ती गई। उसे क्षय रोग हो गया था। दूर-दूर से वैद्य हकीम बुलाए गए। अहिल्याबाई ने अनुष्ठान, पूजा-पाठ, जप करवाए । दान-दक्षिणा दी, पर कोई लाभ नहीं हुआ। नथ्या की हालत दिन प्रतिदिन बिगड़ती ही गई। अन्त में 15 दिसम्बर 1787 को नथ्या का निधन हो गया।

परिवार में शोक छा गया। अहिल्याबाई अत्यन्त दुखी हुईं। यशवंतराव और मुक्ताबाई पर पहाड़ टूट पड़ा।

पुत्र शोक में यशवन्तराव की मानसिक स्थिति बिगड़ने

लगी। दिन-रात वे उसकी याद करते रहते। दिन-रात चिंतित रहने से उनका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। उन्होंने बिस्तर पकड़ लिया। दिन प्रतिदिन वे अशक्त होते गए। बीमारी बढ़ती गई। सभी उपायों और उपचार के उपरान्त भी उन्हें कोई बचा नहीं सका।

3 दिसम्बर 1791 को उनका देहान्त हो गया। मुक्ताबाई विधवा हो गई। उन्होंने सती होने का निश्चय किया। मुक्ताबाई ने सती हाने के लिए माँ से आज्ञा माँगी। अहिल्याबाई ने अपनी एकमात्र पुत्री को समझाया– "मुक्ता ! मेरे बुढ़ापे का तो ख्याल कर। बेटी अब तू ही मेरा सहारा हैं। तू न रहेगी, तो मेरा क्या हाल होगा? विधाता ने एक-एक करके, सभी को मुझसे छीन कर अनाथ कर दिया है। अब तू भी कहती है कि सती हो जाऊँ। तू मुझे निःसहाय छोड़कर मत जा। अपना यह विचार मन से त्याग दे। मैं भी कैसी भाग्यहीन हूँ- परिवार में अपना कोई नहीं बचा। बेटी, तेरे बिना मेरा जीना दूभर हो जाएगा।"

अहिल्याबाई ने कई दिनों तक न खाया, न पिया। दिन-रात वह शोक में डूबी रहतीं। लोग उन्हें समझाते, ढाढस बधाते। लेकिन किसी भी काम में उनका मन न लगता। दिन-रात वे नथ्या को याद करतीं तो कभी मुक्ता को। न रात में नींद आती न दिन में चैन मिलता। उनके जीवन में अंधेरा छा गया।

10

लोक गायक – अनन्त फंदी

महाराष्ट्र के अहमद नगर जिले की एक तहसील है– संगमनेर। संगमनेर में स्वामी फंदी की समाधि है । यहाँ हर साल मेला लगता है। दूर-दूर से लोग मेले में आते हैं। खेल तमाशे देखते हैं। खरीद फरोख्त करते हैं।

इस मेले का मुख्य आकर्षण था– अनन्त फंदी का गायन और तमाशा। अनन्त फंदी अच्छा कलाकार था। संगमनेर का ही रहने वाला था। वह बहुत ही मधुर लावणी गाता था, विचित्र तमाशे दिखाता था। उसकी लावणी सुनकर लोग सुध-बुध खो बैठते थे; तमाशा देखकर लोट-पोट हो जाते थे।

हर साल की तरह मेला लगा लेकिन अनन्त फंदी मेले में नहीं गया। उसने प्रतिज्ञा की थी– न लावणी गाऊँगा, न खेल-तमाशे दिखाऊँगा।

भोले-भाले ग्रामीणों को क्या मालूम था कि अनन्त फंदी की जीवन-धारा की दिशा बदल गई है। वे तो अपने प्यारे लोक गायक की मधुर लावणी सुनना चाहते थे। लोगों ने फंदी से बहुत आग्रह किया। लावणी गाने के लिए अनुनय-विनय की। कोमल हृदय फंदी पिघल गया। केवल गाने के लिए तैयार हो गया।

फंदी साथियों के साथ मेले में गया। लावणी गाने लगा। भीड़ बढ़ने लगी। ठीक उसी समय अहिल्याबाई पूना जाते हुए, वहाँ से निकलीं। अपार जनसमूह को देखकर रूक गईं। पूछने पर पता चला— "फंदी गाना गा रहा है।"

अहिल्याबाई अनंत फंदी के पास गईं। अहिल्याबाई को देखते ही फंदी को अपनी प्रतिज्ञा याद हो गई। लावणी गाना बंद कर दिया। उठकर उसने उन्हें प्रणाम किया और उनसे बैठने का आग्रह किया।

अहिल्याबाई बैठ गईं। फंदी ने भजन शुरू किया। भक्ति भाव से पूर्ण भजन की रसधारा में जनसमूह डूब गया। फंदी भजन गाते-गाते, भाव विभोर होकर नाचने लगा।

भजन समाप्त होने पर अहिल्याबाई ने अनंत फंदी को बुलाया और प्रेम से अशीर्वाद दिया। हाथ का कंगन उतार कर, फंदी को पुरस्कार में दिया।

फंदी बहुत खुश हुआ। देवी ने उसे घर बैठे दर्शन व धन दिया था। जनसमूह अहिल्याबाई की जय-जयकार करने लगा। अनन्त फंदी को हाथों में उठा लिया।

अनन्त फंदी की जीवन धारा को अहिल्याबाई ने ही नया मोड़ दिया था।

यह ऐसे हुआ—

अनंत फंदी लावणी गायक था। महाराष्ट्र के गाँवों में लावणी गाता घूमता, खेल तमाशे भी दिखाता। अहिल्याबाई की धार्मिकता और दानशीलता की कीर्ति सुनकर फंदी उनके दर्शन करने को लालायित हो उठा और एक दिन महेश्वर की ओर चल पड़ा।

फंदी सतपुड़ा पहाड़ पार कर रहा था। इस क्षेत्र में भीलों का बड़ा आंतक था। कुछ भीलों ने फंदी को बंदी बना लिया। उसका सारा सामान लूट लिया। वे फंदी को अपने सरदार के सामने लाए।

साहसी अनंत फंदी घबराया नहीं। अपनी कला का प्रदर्शन करने लगा। मधुर लावणियाँ गाईं। लावणी से सरदार ही नहीं, लुटेरे भील भी मोहित हो गए।

कंठ की कला के बाद अनन्त फंदी ने हाथ की सफाई दिखाई। खेल-तमाशे करके भीलों को आश्चर्य में डाल दिया। भील सरदार फंदी से बहुत प्रसन्न हुए। उसे छोड़ दिया गया। उसका सारा सामान वापस कर दिया। फंदी बहुत खुश हुआ।

फंदी अपना सामान लेकर चलने लगा तब भील सरदार ने पूछा—"कहाँ जाओगे?"

"महेश्वर, अहिल्याबाई के दर्शन करने," फंदी ने बताया। अहिल्याबाई का नाम सुनते ही भील सरदार घबरा गया। भीलों के चेहरे उतर गए। सरदार को बहुत दुख हुआ। उसने फंदी से क्षमा मांगी। उसे अपनी ओर से वस्त्र आदि भेंट किए। चार-पाँच साथियों को उसके साथ कर दिया। उन्होंने फंदी को सकुशल महेश्वर तक पहुँचाया।

महेश्वर पहुँचकर अनंत फंदी ने अहिल्याबाई के दर्शन किए अपनी लावणी सुनाने का निवेदन किया। अहिल्याबाई ने उसका निवेदन स्वीकार कर लिया।

निश्चित दिन महेश्वर में दूर-दूर से लोग आए। अहिल्या
स्वयं भी कार्यक्रम में उपस्थित हुई।

अनंत फंदी ने अपनी ढपली उठाई। काफी देर तक मधुर लावणियाँ गाता रहा। शृंगार रस का आनंद जनसमूह लेता रहा। गायन के बाद फंदी ने खेल-तमाशे दिखाए। जनसमूह झूम उठा।

अहिल्याबाई ने अनन्त फंदी को दूसरे दिन दरबार में बुलाया, उचित सम्मान किया और बहुमूल्य पुरस्कार देकर आशीर्वाद दिया। अनंत फंदी भाव विभोर हो गया। अहिल्याबाई ने पास बुलाकर कहा— "फंदी तुम ऊँचे कुल के हो। तुम्हारे लिए इस तरह के खेल तमाशे दिखाना ठीक नहीं है। तुम सुन्दर लावणी

बनाते हो। बहुत ही मधुर गाते हो। अपनी काव्य शक्ति का सदुपयोग करो। भगवान के भजन रचो और गाओ। इससे तुम्हारा यह लोक व परलोक दोनों ही सुधरेंगे। इस लोक में यश और परलोक में सुख मिलेगा।"

अहिल्याबाई की बातों का फंदी पर गहरा प्रभाव पड़ा। उसके हृदय में नई ज्योति जग गई

हाथ जोड़कर फंदी बोला— "मातेश्वरी आपने मेरी आँखे खोल दीं। अज्ञान के अंधेरे में भटकते राही को आपने प्रकाश का पथ दिखा दिया। मैं अब कभी लावणी नहीं गाऊँगा न ही खेल-तमाशे दिखाऊँगा। सारे होलकर राज्य में प्रभु के गुण गाऊँगा। आपकी यश गाथा घर-घर सुनाऊँगा।"

लावणी गायक फंदी ने अपनी ढपली फोड़ दी। जीवन भर अनंत फंदी भक्ति काव्य कर सृजन करता रहा। मराठी साहित्य के भक्ति काव्य में अनन्त फंदी का महत्वपूर्ण स्थान है।

11

कवियों की कलम से

अहिल्याबाई धर्मपरायण नारी थीं। प्रजा में उनके लिए अपार श्रद्धा थी। उनके समय के कई कवियों, लेखकों, राजनीतिज्ञों और लोक गायकों ने अहिल्याबाई का गुणगान किया है।

खुशालीराम संस्कृत के प्रसिद्ध कवि थे। उन्होंने ''अहिल्या कामधेनु'' नामक काव्य-ग्रन्थ लिखा। अहिल्याबाई का परिचय खुशालीराम ने अपने काव्य में इस प्रकार दिया है:

तस्यैसा कुलदक्षिणी कुलपतेमल्लारिरावस्य वे।
धर्मिष्ठार्थकरी स्नुषा शुभमती स्तुतयात्वहल्याभिया।।
खण्डोराव वधू: सती प्रियगुणा यत्पारलोके हितं।
नित्यं वैष्णव सद्व्रतं गुणवती पूर्व यथा कुर्वती।।

अर्थ– मल्हारराव की यह कुलवधू– विचार शीला, धर्मात्मा अहिल्याबाई खण्डेराव की धर्मपत्नी थी। वे बहुत ही गुणवती थीं तथा परलोक हितार्थ नित्य धार्मिक कार्यों में लगी रहती थीं।

अहिल्याबाई की जीवनचर्या का वर्णन करते हुए खुशालीराम ने लिखा है:

नित्यं सा ददाति दानं देव ब्राह्मण पूजकान।
कालं व्यत्येति सासम्यम् धर्ममार्ग परायणा।।

अर्थ– वे सदा देव, ब्राह्मण और पुजारियों को दान देती थीं तथा धर्मकार्य में व्यस्त रह कर अपना समय व्यतीत करती थीं।

अहिल्याबाई की दानशीलता के बारे में कवि खुशालीराम ने लिखा है–

कुरूक्षेत्रतीर्थे तुलादानमेवं।
सुवर्णात्मरोप्यादिकं बारं बारं।।
अहिल्या पिसा संसददो दानशीला।
घरा देवताभ्यो गुणज्ञानशीला।।

कुरूक्षेत्र में कई बार सोने और चांदी का तुलादान किया। गुण-ज्ञान और शील सम्पन्न,दानशीला अहिल्याबाई ने ब्राह्मणों को भी बहुत दान दिया।

अहिल्याबाई देश में अनेक तरह से अन्न दान करतीं। याचकों की याचना पूर्ण करतीं। शरण में आये लोगों की इच्छा पूर्ण करतीं।

मोरोपंत मराठी के प्रसिद्ध भक्त कवि थे। वे उत्तर भारत के तीर्थ स्थानों की यात्रा पर गए। जगह-जगह उन्होंने अहिल्याबाई द्वारा बनवाए गए मंदिर, धर्मशालएँ, कुएँ, बावड़ियाँ, अन्नसत्र देखे। अहिल्याबाई की दान दक्षिणा, प्रजा-प्रेम, धर्मपरायणता, न्यायप्रियता की सर्वत्र महिमा सुनी। अहिल्याबाई की यश कीर्ति से कवि मोरोपंत काफी प्रभावित हुए। एक बार पवित्र नदी गंगा में मोरोपंत स्नान कर रहे थे। स्नान करते समय पवित्र श्लोकों का वे पाठ कर रहे थे तभी सहसा उनके श्रीमुख से निम्न शब्द उनकी मातृभाषा मराठी में फूटे–

देवी। अहिल्याबाई यावी मेटावयास सत्वरेती।
तू पुण्य कीर्ति है ही गंगे, दोघीजणी ही सत्वर ती।

अर्थात– हे देवी गंगा। मैं अहिल्याबाई से भेंट करने जाऊँगा। जैसे संसार में तुम्हारी पुण्य कीर्ति प्रसिद्ध है, इसी तरह वे भी

प्रसिद्ध हैं। दोनों ही सदगुणी हैं। दोनों से संसार का उपकार होता है।

उत्तर भारत से दक्षिण लौटते समय कवि मोरोपंत अहिल्याबाई के दर्शन हेतु महेश्वर पहुँचे।

महेश्वर में अहिल्याबाई ने मोरोपंत का बड़ा आदर सत्कार किया। मान-सम्मान किया। कवि मोरोपत अहिल्याबाई के दर्शन कर भावविभोर हो उठे। देवी अहिल्याबाई की महानता को उन्होंने मराठी काव्य में यों लिखा—

श्री हरिहर भक्ता तू देविअहल्ये वरा धरा भूषा।
पूषा तुज साधु म्हणे ख्याता तुज सम न बाणतनु भूषा।।

अर्थ— हे देवी अहिल्या, तुम भगवान हरिहर की परम भक्त हो। अपनी भक्ति के कारण तुम पृथ्वी का श्रेष्ठ आभूषण बन गई हो। सूर्य भी तुम्हारी प्रशंसा करता है। आपके समान बाण की पुत्री उषा भी प्रसिद्ध नहीं है।

देवी अहिल्याबाई। झालीस जगत्त्रयात तू धन्या।
न न्याय- धर्मनिरता अन्या कलिमाजि ऐकिली कन्या।।

अर्थ— हे देवी अहिल्याबाई, आप तीनों लोकों में धन्य हो। धर्म और न्यायपरायणता में आपके समान दूसरी नारी नहीं है।

श्री विष्णुपदा स्तविली त्वद्भक्तां हे तुलाहि मानवें।
विश्व जिला वानितसे कां न मयूरेहि तीस बनावें।।

अर्थ— हे विष्णुपद , अहिल्याबाई तुम्हारी परमभक्त है। तम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि सब लोग उनकी प्रशंसा करते हैं तो मोरोपंत उनकी प्रशंसा क्यों न करे?

कवि मोरोपंत ईश्वर भक्त थे। ईश्वर भक्ति में काव्य लिखना उनका धर्म था। अहिल्याबाई ईश्वर की परम भक्त थी। इसी कारण उन्होंने अहिल्याबाई की प्रशंसा खुले हृदय से की है।

भील कौड़ी

मध्य प्रदेश के पश्चिम में मालवा एवं निमाड़ क्षेत्र हैं। यहाँ के जंगलों में गोंड, भील, रामोशी आदि आदिवासी लोग रहते थे। चोरी, लूट-पाट इनके मुख्य काम थे। ये लोग दिन-दहाड़े चोरी लूट-पाट करते। राहगीरों को लूट लेते। ये लोग अपने आपको भगवान महादेव का भक्त बताते। इनकी धारणा थी लोगों को लूटने और मारने से भगवान खुश होते हैं।

इन लोगों का आतंक बढ़ने लगा। प्रजा का एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना कठिन हो गया। यात्रियों से जबरन एक प्रकार का कर वसूलने लगे। इसे ''भील कौड़ी'' कहा जाता था। अहिल्याबाई के पास इनके कारनामों की शिकायतें रोज़ पहुँचने लगीं।

अहिल्याबाई ने इन लोगों के पास संदेश भिजवाया— ''लूट-पाट, हिंसा की वारदातें छोड़ दें। शांति से रहें। मेहनत मजदूरी करें। जो तकलीफे हैं उनके लिए मेरे पास आएँ। मैं आप लोगों की पूरी मदद करूँगी। हिंसा,लूट की घटना बर्दाश्त नहीं की जायेगी।''

अपराधीजनों पर अहिल्याबाई के संदेश का कोई असर नहीं पड़ा। वे अहिल्याबाई के शांति संदेश को उनकी कमजोरी समझकर लूटपाट में लगे रहे। वास्तव में उक्त क्षेत्रों के छोटे-छोटे सामन्त सरदार इन लोगों को भड़काते। लूटपाट करवाते। उनको संरक्षण देते। बदले में लूट के माल में से कुछ भाग प्राप्त करते थे।

समझाने से जब ये लोग नहीं समझे तब अहिल्याबाई ने उनके मुखियाओं को गिरफ्तार करवा लिया। कई को कठोर दंड दिया। जेल में डाल दिया। कुछेक को मौत की सजा दी। इससे इन लोगों में भय छा गया।

अहिल्याबाई ने एक और काम किया। इन लोगों को जमीन देकर स्थायी रूप से बसा दिया। साथ ही उनके क्षेत्र से निकलने

वाले राहगीरों की जानमाल की सुरक्षा की जिम्मेदारी भी सौंप दी। यदि राह में किसी को लूटा जाता तो उसकी भरपाई उस स्थान के आसपास रहने वालों को करनी पड़ती थी। इस कारण राहगीरों के लुटेरे राहगीरों के रक्षक बन गए।

इसी तरह राज्य में लूट-पाट बंद हो गई। राहगीर बेधड़क आने-जाने लगे। व्यापार-व्यवसाय बढ़ने लगा। राज्य में सुख शांति छा गई।

अहिल्याबाई चाहतीं तो सैन्य बल द्वारा इन लोगों को कुचल सकती थीं। खून-खराबे में उन्हें तनिक भी विश्वास नहीं था। जहाँ तक संभव होता वे किसी भी समस्या को शांति-प्रेम, सहयोग और समझौते द्वारा सुलझाने का प्रयास करती थीं।

राज्य शंकर का— सुरक्षा प्रजा की

पुराने समय में छोटे-छोटे राज्य थे। राज्य में राजा-रानी होते थे। ये ही राज्य करते थे। शासन चलाते थे। ऐसा शासन, राजतंत्र कहलाता था। आजकल जनता का राज है। जनता अपने प्रतिनिधि चुनती है। ये लोग ही राज्य चलाते हैं। ऐसा शासन जनतंत्र कहलाता है। जनतंत्र में जनता का राज्य होता है। हमारे देश में भी जनतंत्र है।

अहिल्याबाई के समय में देश में छोटे-छोटे राज्य थे। राजाओं का राज्य था। अंग्रेज भी अपना अधिकार बढ़ा रहे थे। देशी राजा आपस में लड़ते रहते। अंग्रेज बड़े चालक थे। वे राजाओं को आपस में लड़ाते। राजा लोग ऐश आराम में डूबे रहते। प्रजा की कोई चिन्ता नहीं करते।

उस समय के बारे में, प्रसिद्ध उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा ने लिखा है—

> "चारों ओर गड़बड़ी मची हुई थी। शासन और व्यवस्था के नाम पर घोर अत्याचार हो रहे थे। प्रजाजन, साधारण गृहस्थ, किसान, मजदूर, अत्यन्त हीन अवस्था में सिसक

रहे थे। न्याय में न शक्ति रही थी, न विश्वास। धर्म, अंधविश्वासों और रूढ़ियों में जकड़ा जा रहा था।"

ऐसे ही समय में अहिल्याबाई ने शासन संभाला था। उनका राज्य पूना के पेशवाओं के अधीन था। पेशवाओं का अहिल्याबाई बहुत आदर करती थीं। वे धन दौलत देतीं और सेना रसद भेजतीं। गोला बारूद का इंतजाम भी करती थीं। अहिल्याबाई का कहना था– "पेशवाओं का काम पहले किया जाए। इसके बाद मेरा काम।"

पेशवा भी उनका सम्मान करते थे। उनकी राज्य व्यवस्था की प्रशंसा करते। चतुराई, कुशलता, दक्षता की तारीफ करते।

वे राज-काज सलाहकारों की सलाह से करतीं। अंतिम निर्णय उनका ही होता। राज्य की संपूर्ण शक्ति अहिल्याबाई के हाथ में थी। सेना की कमान तुकोजीराव के हाथ में थी। वे होलकर राज्य के सूबेदार भी थे। कहा जाता है– "घोड़ा एक के हाथ में था, तो लगाम दूसरे के हाथ में।"

अहिल्याबाई का राज्य छोटा था। इसमें मालवा और निमाड़ के क्षेत्र थे। दक्षिण के पठार और राजस्थान का कुछ भाग भी था। उनके राज्य की सीमा इस तरह थी–

उत्तर में उदयपुर व कोटा राज्य थे। उत्तर-पूर्व में झालावाड़ राज्य था। पूर्व में भोपाल, ग्वालियर व देवाल राज्य थे। दक्षिण में निजाम हैदराबाद के राज्य थे। पश्चिम में बड़वानी व डूंगरपुर राज्य थे।

अहिल्याबाई ने राज्य को छोटे-छोटे भागों में बाँट रखा था। इनको परगना कहते थे। इनकी व्यवस्था के लिए कुशल अधिकारी थे। ये अधिकारी प्रजा की सुख-सुविधा का ध्यान रखते, कल्याणकारी कार्य करते, राज्य के लिए कर वसूलते और लगान लेते।

अहिल्याबाई को कुशल लोगों की अच्छी परख थी। वे कुशल अधिकारियों और कर्मचारियों की नियुक्ति करती थीं।

उनके साथ अच्छा व्यवहार करती थीं। वे पर्याप्त सुविधाएँ देतीं और मान-सम्मान करती थीं। अधिकारियों और कर्मचारियों को उचित वेतन दिया जाता था। फिर भी कोई गड़बड़ करता, तो कठोर दंड दिया जाता था। अहिल्याबाई ऐसे अधिकारी को नौकरी से हटा देती थीं। वह कोई भी क्यों न हो, चाहे निकट संबंधी ही हो। प्रजा को कोई दुख दे, यह वे सहन नहीं करती थीं।

सेनापति तुकोजीराव का बेटा था मल्हारराव। उसने बहुत उत्पात मचाया और लोगों को सताया। अधिकारियों से धन वसूला। सभी उससे त्रस्त हो गए थे। अहिल्याबाई ने उसे समझाया। कई बार क्षमा भी किया। फिर भी, उस शैतान ने शैतानी न छोड़ी। अहिल्याबाई ने उसे जेल में बंद करवा दिया।

अहिल्याबाई का कहना था– "यह राज्य मेरा नहीं है । भगवान शंकर का है जो सारे संसार का कल्याण करते हैं । मैं तो उनका काम करने वाली हूँ । उनकी सेविका हूँ ।"

अहिल्याबाई के शासन का मुख्य उद्देश्य था– प्रजा की भलाई, सुरक्षा, सुख-सुविधा जुटाना, बाहरी आक्रमण, विद्रोहियों और चोर-डाकुओं से राज्य की रक्षा करना।

इसके लिए सेना जरूरी है। अहिल्याबाई के पास एक विशाल सेना थी। सेना में हाथी, घोड़े, ऊँट, रथ, पैदल सैनिक तथा तोपें थीं। आजकल हर राज्य के पास तीन तरह की सेना होती है– जल, थल तथा नभ सेना। जल सेना समुद्री तट की रक्षा करती है, थल सेना जमीन पर लड़ती है तथा नभ सेना आकाश में मोर्चा संभालती है।

अहिल्याबाई युद्ध को टालतीं। उन्होंने स्वयं किसी राज्य पर हमला नहीं किया। कई बार मजबूरी में युद्ध करने पड़े। युद्धों का संचालन उन्होंने कुशलतापूर्वक किया। दुश्मन को सदैव मुँह की खानी पड़ी।

अहिल्याबाई की सैनिक व्यवस्था उत्तम एवं सुदृढ़ थी। सेना सदा तैयार रहती। सैनिकों को प्रशिक्षण दिया जाता था। युद्ध सामग्री साधन सदा तैयार रहते।

अहिल्याबाई की सैनिक व्यवस्था दो तरह की थी—

एक—सर अंजामी सरदारों की सेना, दूसरी— जागीरदारों की सेना।

यह व्यवस्था मल्हारराव होलकर ने कायम की थी। अहिल्याबाई ने इसे उसी स्वरूप में बनाये रखा।

सर अंजामी सेना

अहिल्याबाई के राज्य में 18 सरदार थे। उनके अधिकार में एक-एक लाख आमदनी का क्षेत्र था। इन सरदारों को सेना तैयार रखनी पड़ती थी। इनकी सेना में निश्चित संख्या में पैदल सैनिक होते। घुड़सवार सैनिक भी होते थे। इनको तोपखाना व हथियारों का प्रबंध भी करना होता था।

जागीरदारों की सेना

जागीरदार वंश परंपरागत होते थे। इन्हें भी सेना तैयार रखनी होती थी। अहिल्याबाई के समय महेश्वर, सेंधवा, जालना, चांदबाड़, हिंगलाजगढ़, कुशलगढ़ तथा असीरगढ़ आदि जगहों पर मजबूत किले थे। इन किलों में सुसज्जित सेना रखी जाती थी। कुशल अधिकारी किलों की देख-रेख करते थे। सेना की व्यवस्था भी करते थे।

अहिल्याबाई सैनिकों का बहुत ध्यान रखतीं। युद्ध के समय उनके परिवारजनों की देखभाल राज्य करता। वीरगति पाने वाले सैनिकों के परिवार को पर्याप्त आर्थिक मदद दी जाती।

सैनिक भी अहिल्याबाई के प्रति वफादार थे। वे सदैव उन्हें आदर देते। उनके लिए जान की बाजी लगाने को तैयार रहते।

कहा जाता है—

एक बार तुकोजीराव और अहिल्याबाई में मनमुटाव हो गया। तुकोजीराव ने सैनिकों को भड़काना चाहा। अहिल्याबाई

के खिलाफ हथियार उठाने को कहा। सैनिकों ने उनकी एक न सुनी यद्यपि वे प्रधान सेनापति भी थे।

युद्ध के समय अधिक सैनिकों की जरूरत पड़ती, तब अहिल्याबाई तुरन्त नई सैनिक टुकड़ियाँ तैयार करतीं। उन्हें प्रशिक्षण देतीं। शीघ्र ही मोर्चे पर भेज देतीं।

अहिल्याबाई ने एक महिला सेना भी तैयार की थी। महिलाओं को घुड़सवारी करना, हथियार चलाना स्वयं उन्होंने सिखाया था।

युद्ध के तरीके व साधन बदलते हैं। युद्ध का प्रशिक्षण सैनिकों को दिया जाना जरूरी है। इस बात को अहिल्याबाई अच्छी तरह समझती थीं। उन्होंने अमेरिकन जे.पी. कर्नल बाइड से अपने सैनिकों को आधुनिक ढंग की युद्ध कला का प्रशिक्षण दिलवाया था।

शक्तिशाली सेना ही राज्य की तथा प्रजा की रक्षा कर पाती है। अहिल्याबाई की सेना विशाल तथा शक्तिशाली थी। इसी कारण किसी देशी राजा ने उनके राज्य पर हमला करने का साहस नहीं किया।

12

उन्नति का आधार–अर्थ और व्यापार

अहिल्याबाई के शासनकाल में शांति थी। उनका शासन लोकप्रिय था। प्रजा-सुखी थी। प्रजा की आर्थिक दशा अच्छी थी। अनाज खूब पैदा होता था। व्यापार-व्यवसाय उन्नत था। राज्य की आर्थिक हालत सुदृढ़ थी। कर कम थे। भूमिकर, दंड एवं चुंगी से राज्य को आमदनी होती थी। अहिल्याबाई के शासन काल की अर्थ व्यवस्था के दो भाग थे–

खासगी सम्पत्ति और सरकारी सम्पत्ति।

खासगी सम्पत्ति

यह शासक की स्वयं की सम्पत्ति होती थी। इसे खासगी सम्पत्ति कहा जाता था। वे इसका निजी काम में उपयोग करते थे।

सन् 1734 की बात है। पूना के पेशवा ने होलकर परिवार को कुछ परगने "खासगी जागीर" के रूप में दिए थे। इस जागीर की 3 लाख सालाना आमदनी थी। यही आमदनी "खासगी सम्पत्ति" थी। इस पर राज्य या पेशवा का कोई अधिकार नहीं था।

मल्हारराव ने काफी खासगी सम्पत्ति जोड़ी थी। अहिल्याबाई को 15 करोड़ की खासगी सम्पत्ति मिली थी। इस पर अहिल्याबाई का पूर्ण अधिकार था। कई मराठा सरदार इस सम्पत्ति को हड़पना चाहते थे। इस सम्पत्ति के लिए तुकोजीराव व अहिल्याबाई में मनमुटाव भी हो गया था। अहिल्याबाई की निडरता, साहस, दो टूक बोलने के कारण किसी की दाल नहीं गली।

अहिल्याबाई खासगी सम्पत्ति का उपयोग पूजा-पाठ में करतीं। दान-दक्षिणा देतीं। घाट-मंदिर बनवातीं। गरीबों और असहायों की मदद करतीं। विद्वानों की सहायता करतीं। उनका मान-सम्मान करतीं। यों खासगी सम्पत्ति का उपयोग वे जनहित में करतीं। अहिल्याबाई के समय, खासगी जागीर से 15 लाख रुपये सालाना आय होने लगी थी।

सरकारी सम्पत्ति

सरकारी खजाने में भूमिकर, दंड व चुंगीकर से आय होती थी। यह राज्य की आमदनी थी। इस पर होलकर परिवार का कोई अधिकार नहीं था। मल्हारराव के समय वह आय साढ़े चौहत्तर लाख सालाना थी। अहिल्याबाई के समय आमदनी बढ़ गई। हर साल लगभग एक करोड़ पाँच लाख रुपये सरकारी खजाने में जमा होते थे।

वसूली और खर्च के नियम कठोर थे। फिजूलखर्ची बिल्कुल नहीं की जाती थी। सरकारी खजाने की व्यवस्था अहिल्याबाई स्वयं देखती थीं। यह धन सरकारी व्यवस्था में खर्च होता। सेना की व्यवस्था की जाती। जन-कल्याण के कार्य होते। हर खर्च अहिल्याबाई की स्वीकृति से ही होता था।

कर-वसूली की विधि आसान थी। अधिकारी निर्धारित कर ही वसूलते थे। आय-व्यय का पूरा-पूरा हिसाब रखा जाता था। कोई कर्मचारी अर्थ के मामले में गड़बड़ी करता तो कठोर दंड पाता।

अहिल्याबाई ने चाँदी और ताँबे के सिक्के ढलवाए थे। एक आना, दो अना, चार आने, एक रुपया, चाँदी के थे। धेला (आधा पैसा) एक पैसा, आधा आना (दो पैसे) ताँबे के थे। सिक्के ढालने की टकसाल महेश्वर व मल्हारगढ़ में थी। चाँदी के सिक्कों पर शिवलिंग, जलधारी व बेल-पत्र बने थे। इतिहासकार बी.एन. लुणिया ने लिखा है–

> "ऐसा अनुमान है कि अहिल्याबाई के शासन काल में महेश्वर में सिक्कों के ढालने की टकसाल थी। बाद में इन्दौर में भी टकसाल स्थापित हो गई। व्यापारी और साहूकार अपनी ओर से टकसाल में चाँदी देकर सिक्के ढलवा लिया करते थे और ढलाई के लिए वे निर्धारित धनराशि टकसाल में देते थे। टकसाल पर सरकारी नियंत्रण रहता था और उसके अपने अधिकारी और कर्मचारी थे।"

एक कहावत– जहाँ बहु नाज, वहाँ बहुकाज। जहाँ अधिक अनाज पैदा होता है, वहाँ बहुत काम-काज होता है। अनाज और दूसरी चीजें सस्ती मिलती हैं। लोग सुखी होते हैं। उनका जीवन स्तर उन्नत होता है। वहाँ अपराध कम होते हैं।

कृषि

अहिल्याबाई के समय खूब अनाज पैदा होता था। उन्होंने कृषि कृषकों की भलाई के कई काम किये। भूमि पर लगान कम कर दिया। अहिल्याबाई के समय भूमि कर, उपज का एक चौथाई लिया जाता था। साधारणतया एक बीघा कृषि भूमि पर लगान एक रुपया था । लगान वसूली में सुविधा के लिए राज्य को उत्तरी, मध्य तथा दक्षिणी तीन भागों में बांटा गया था।

उत्तरी भाग में इन्दौर, तराना तथा राजस्थान का क्षेत्र था। मध्य भाग में राजधानी महेश्वर व उसके आसपास का क्षेत्र था। दक्षिणी भाग में सतपुड़ा से दक्षिण की ओर का क्षेत्र था।

कभी उपज कम होती, तब लगान में छूट दी जाती थी। सैनिक कार्यवाही से खेती को नुकसान पहुँचता, तब इसकी भरपाई राज्य करता था। राज्य से खाद्यान्न बाहर भी भेजा जाता था।

व्यापार-व्यवसाय

राज्य में व्यापार-व्यवसाय की दशा अच्छी थी। वस्त्र, अन्न, खिलौने तथा लघु उद्योगों पर कर कम थे। कर वसूली के नियम सरल थे। हर वस्तु के लिए कर निश्चित थे।

राज्य में आयात-निर्यात पर चुंगीकर लिया जाता था। चुंगीकर राज्य की आय का एक बड़ा साधन था। चुंगीकर राज्य की सीमा पर, नगर सीमा में प्रवेश पर और नदी के घाटों पर लिया जाता था। वस्तुओं के लेन-देन के लिए नाप और तोल के निर्धारित पैमाने थे। राज्य में व्यापारियों को कई सुविधाएँ थीं। वे निश्चित होकर व्यापार व्यवसाय करते थे। महेश्वर व्यापार का प्रमुख केन्द्र था। महेश्वरी साड़ी का उद्योग बहुत बढ़ गया था।

होलकर राज्य भारत के मध्य में था। उत्तर दक्षिण, आने-जाने का मार्ग इसी राज्य में से था। इसी मार्ग से व्यापारिक माल का आना-जाना होता था। इस कारण होलकर राज्य को चुंगीकर से काफी आमदनी होती थी।

अहिल्याबाई के समय राज्य की आमदनी बढ़ी और व्यापार-व्यवसाय बढ़ा। उद्योग-धंधे, खेती किसानी का काम बढ़ा, इससे लोगों की आमदनी बढ़ी। जीवन स्तर सुधरा। लोग अहिल्याबाई के राज्य की तुलना राम-राज्य से करते थे।

दूध का दूध – पानी का पानी

सिरोंज का एक साहूकार था। नाम था खेमदास। उसका लम्बा-चौड़ा व्यापार था। अपार धन-सम्पत्ति थी, पर संतान नहीं थी। खेमदास सदा दुखी रहता। दिन-रात सोचता मेरे धन का क्या होगा? कहा गया है–

जहाँ धन है, वहाँ संतान नहीं।
जहाँ संतान है, वहाँ धन नहीं।

और एक दिन, वह निःसंतान चल बसा। उस समय नियम था कि कोई निःसंतान मर जाता तो उसकी सारी सम्पत्ति, सरकार ज़प्त कर लेती। सिरोंज के अधिकारी की नीयत बदली। उसने खेमदास की विधवा पत्नी से कहा– "मुझे तीन लाख रुपये दे दो। मैं तुम्हारे पति की सम्पत्ति, तुम्हारे नाम कर दूँगा।"

लोगों ने विधवा को सलाह दी–किसी बालक को गोद ले लो। अधिकारी ने गोद लेने की अनुमति भी नहीं दी। उसने कहा– "पहले तीन लाख रुपये दो, फिर अनुमति दूंगा।"

नारी के राज्य में नारी के साथ अन्याय? अन्याय अधिक अवधि तक नहीं चला। दुख के बाद सुख आता ही है। रात के बाद दिन। अन्यायी का अंत होता ही है।

खेमदास की पत्नी को लोगों ने सलाह दी– "वह अहिल्याबाई से मिले। अधिकारी की हरकत बताकर न्याय माँगे।" सलाह नेक थी। नेक काम में देरी क्यों? वह महेश्वर पहुँची। साथ में गोद लेने वाले बालक को भी ले गई। उसने अहिल्याबाई को अपने पर आई हुई आपत्ति सुनाई और बालक को गोद लेने की अनुमति माँगी।

अहिल्याबाई ने शिकायत की छान-बीन कराई। अधिकारी अपराधी पाया गया। उसे नौकरी से हटा दिया गया। कठोर दंड दिया गया। खेमदास की विधवा को पुत्र गोद लेने की अनुमति अहिल्याबाई ने दे दी। पति की सम्पत्ति भी उसके नाम कर दी। नारी ने नारी की पीड़ा को दूर किया। विधवा प्रसन्न हुई। वह खुशी-खुशी घर गई।

अहिल्याबाई दरबार में बैठी थी। एक फरियादी आया। उसका नाम था– राणोजी थिटे। वह था, महादजी थिटे का पोता। उसने कुछ कागज अहिल्याबाई को दिखाए। हाथ

जोड़कर निवेदन किया– "माता, बात पुरानी है। आपके ससुर ने मेरे दादाजी से कर्ज लिया था। यह कर्ज घोड़े खरीदने के लिए लिया गया था। इन कागजों में सारी लिखा पढ़ी है। उन्होंने कर्ज लौटाया नहीं। आज संसार में न मेरे दादाजी हैं, न आपके ससुर ही। आप दयावान और न्याय प्रिय हैं। अपने ससुर का कर्ज लौटा दीजिए।"

अहिल्याबाई ने कागजों की जांच पड़ताल कराई। पता चला, सारी लिखा-पढ़ी सच है। मल्हारराव ने कर्ज लिया था, पर लौटाया नहीं था। अहिल्याबाई ने दादा का पैसा, पोते को लौटाया। ससुर का कर्ज बहू ने चुकाया।

अहिल्याबाई के न्याय की ऐसी कई घटनाएँ हैं। कई कथा-कहानियाँ हैं वे हमेशा दूध का दूध पानी का पानी करती थीं। उनके समय न्याय व्यवस्था उत्तम थी। वे स्वयं न्याय करती थीं। राज्य में कई जगह न्यायालय थे। कुशल योग्य अनुभवी व्यक्ति न्याय-कार्य करते थे। इनके कार्यों से कोई संतुष्ट नहीं होता तो वह सीधे अहिल्याबाई से फरियाद कर सकता था। न्याय के काम में किसी ने अन्याय किया हो तो ऐसे न्यायकर्ता को वे हटा देती थीं।

अहिल्याबाई ने पंचायती न्याय व्यवस्था लागू की थी। इससे न्याय सहज,सस्ता व शीघ्र होता था। न्याय के कार्य में वे स्वयं सदा निष्पक्ष रहतीं। उनके फैसले से दोनों पक्षों को संतोष होता था। कई लोग घरेलू मामलों का निपटारा उनसे करवाते थे। दूसरे राज्यों के राजा अपने आपसी विवाद का निपटारा भी अहिल्याबाई से करवाते थे।

एक बार की बात है–

जमीन के कुछ हिस्से का मामला था। इसके लिए सिंधिया और होलकर राज्य में विवाद ठन गया। दोनों राज्य उस पर अपना अधिकार जमाना चाहते थे। कई वर्षों तक यह विवाद चला। अंत में दोनों राज्यों के अधिकारियों ने तय किया कि इस

विवाद का निपटारा अहिल्याबाई से ही कराया जाए।

दोनों राज्यों ने फैसला स्वीकार किया। कैसा भी मामला हो। चाहे अहिल्याबाई का रिश्तेदार हो,चाहे बड़े से बड़ा अधिकारी हो या छोटे से छोटा व्यक्ति। वे निष्पक्षता और कठोरता से न्याय करती थीं। इसी कारण सारे देश में वे न्याय के लिए विख्यात थीं।

जीओ और जीने दो

अहिल्याबाई शांति-प्रिय थीं। वे युद्धों को टालना उचित समझती थीं। जीओ और जीने दो सिद्धान्त का पालन उन्होंने जीवन भर किया। उन्होंने किसी राज्य पर आक्रमण नहीं किया, न किसी के राज्य में लूट-पाट की, न किसी से धन वसूली की। किसी राज्य ने भी उन पर हमला नहीं किया।

दिल्ली, उदयपुर, मैसूर और हैदराबाद के शासक अहिल्याबाई का बहुत आदर करते थे। देश के सभी राज्यों से उनके मधुर संबंध थे।

पूना, ग्वालियर, मारवाड़, भरतपुर, जयपुर, जोधपुर आदि राज्यों के राजदूत महेश्वर में रहते थे। ये होलकर राज्य के कार्यों की सूचना अपने राज्यों को भेजते थे। अहिल्याबाई ने भी कई राज्यों में अपने राजदूत एवं गुप्तचर नियुक्त किये थे। वे योग्य तथा विश्वासपात्र व्यक्तियों को ही इन पदों पर नियुक्त करती थीं।

अहिल्याबाई अत्यन्त चतुर शासक और कुशल राजनीतिज्ञ थीं। वे निपुण कूटनीतिज्ञ भी थीं। इतिहासकार जदुनाथ सरकार ने लिखा है–

> "मूल कागज पत्रों से यह सिद्ध होता है, कि अहिल्याबाई प्रथम श्रेणी की राजनीतिज्ञ थीं। इसी कारण उन्होंने बड़ी तत्परता से महादजी को सहयोग दिया। यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि अहिल्याबाई की सहायता के बिना

उत्तर भारत की राजनीति में महादजी को महान सफलताएँ कभी भी नहीं मिल पातीं।"

राघोबा तथा चन्द्रावतों के साथ व्यवहार से उनकी राजनीतिक कुशलता तथा दूरदर्शिता प्रकट होती है।

नाना फड़नवीस ने कहा था—

"देवी अहिल्याबाई में अलौकिक शक्ति का आभास होता है। वह आत्म संयमी और तेज पुंज हैं। वह धार्मिक भावनाओं से परिपूर्ण होते हुए लोकहित में कार्यरत हैं। देवी अहिल्याबाई के समान अभी कोई दूसरा दूरदर्शी और उत्साही नहीं है।"

जन-जन का कल्याण

अहिल्याबाई अपनी प्रजा को अपनी संतान की तरह समझती थीं। उन्होंने जीवन भर दुख सहा लेकिन प्रजा को सुख पहुँचाया।

होलकर राज्य की बागडोर हाथ में लेते ही, अहिल्याबाई ने कई क्रांतिकारी कार्य किए। कई पुराने, कठोर तथा दकियानूसी कानूनों को समाप्त कर दिया। किसानों का लगान कम किया और कर की दर कम की। कृषि, उद्योग धंधों को सुविधाएँ दीं और विकास के अनेक कार्य किए। चोर-डाकुओं को ठिकाने लगाया और लुटेरे-भीलों को जमीन देकर बसाया। गरीब असहायजनों की सहायता की। देश के कोने-कोने में निर्माण कार्य कराए। हजारों-लाखों लोगों को रोजगार दिया। वे जनहित को ही अपना कर्त्तव्य समझती थीं। प्रजा-कल्याण के लिए अहिल्याबाई ने अनेक कार्य किये। इसलिए उनके राज्य को लोक कल्याणकारी राज्य कहना उचित होगा।

सेवा-सहायता

कृष्ण और सुदामा उज्जैन में सांदीपनी आश्रम में पढ़ते थे। दोनों में गहरी मित्रता थी। बड़े होने पर श्रीकृष्ण मथुरा के शासक बने। सुदामा ब्राह्मण थे। पूजा-पाठ, कथा-भागवत पढ़ते थे।

प्राप्त दान-दक्षिणा से घर-गृहस्थी चलाते थे। घर में सदा अभाव बना रहता। उनकी पत्नी ने कहा श्रीकृष्ण तो आपके बचपन के मित्र हैं। अब तो वे मथुरा के शासक हैं। उनके पास जाओ। उनसे कुछ मदद माँगो! सारी गरीबी दूर हो जाएगी। सुदामा बड़े संकोच के साथ मथुरा गए।

श्रीकृष्ण ने सुदामा का बहुत ही आदर-सत्कार किया। खूब मेहमानी होती रही। कुछ दिनों बाद सुदामा अपने घर जाने के लिए तैयार हुए। श्रीकृष्ण ने अश्रुपूरित नेत्रों से मित्र को विदा किया।

सुदामा जैसे खाली हाथ आये थे वैसे ही खाली हाथ लौटे। मन में बड़ा दुख हुआ– "बड़ी आशा से आया था। मित्र, दीन-दशा देखकर कुछ मदद करेगा। मित्र ने फूटी कौड़ी भी नहीं दी। इससे तो अच्छा होता, मैं आता ही नहीं। सच है, जब आदमी बड़ा बन जाता है, तब नाते-रिश्ते भूल जाता है। कौन किसका होता है?" ऐसे विचारों में डूबे, सुदामा अपने गाँव पहुँचे। अपनी टूटी-फूटी झोपड़ी की ओर बढ़े, तो आश्चर्यचकित रह गए। वहाँ तो बड़ा सुन्दर भवन था। भ्रम हुआ, कहीं दूसरी जगह तो नहीं आ गया। जब उनकी पत्नी ने देखा, तो उन्हें बुलवाया। सुदामा जब मथुरा में थे तब श्रीकृष्ण ने उनका भव्य भवन बनवा दिया था।

ऐसी ही एक घटना अहिल्याबाई के समय हुई। काशी में एक ब्राहमण रहते थे। उनका मकान जलकर राख हो गया। ब्राहमण बहुत दुखी हुआ। अहिल्याबाई की दानशीलता की गाथा उसने सुनी थी।

अपना उजड़ा घर बनाने की आशा से वह महेश्वर पहुँचा। भारी मन से अहिल्याबाई को अपनी दुर्दशा का हाल सुनाया और घर बनवाने के लिए धन की याचना की।

अहिल्याबाई ने उसे धीरज बंधाया, सांत्वना दी, महेश्वर में रहने, भोजन आदि का प्रबंध करवाया। महेश्वर में रहकर

ब्राह्मण रवाना होने लगे। मान-सम्मान के साथ अहिल्याबाई ने उसे बिदाई दी।

ब्राह्मण को नकद धन कुछ भी नहीं मिला। बड़े निराश हुए। पाँच-छः माह तक देशाटन करते रहे। जब वे काशी पहुँचे तो अपने जले मकान की जगह नया मकान देखा तो दंग रह गए। अहिल्याबाई को सहस्रों आशीष दिए।

ब्राह्मण जब महेश्वर में ही था। अहिल्याबाई ने काशी में अपने अधिकारी को आदेश दिया था–"यदि वास्तव में ब्राह्मण का घर जल गया है, तो नया घर बना कर उन्हें भेंट कर दिया जाए।"

अहिल्याबाई जीवन भर, गरीबों, असहाय, पीड़ितजनों, ब्राह्मणों और विद्वानों, को दान-दक्षिणा, पुरस्कार और मान-सम्मान, देती रहीं। किसी को इलाज के लिए तो किसी को मृत्यु पर उसके क्रिया-कर्म के लिए धन देतीं। किसी को धन, तो किसी को मकान, जमीन, जागीर गाँव दान देती थीं।

त्यौहारों, सूर्य ग्रहण, चन्द्रग्रहण आदि अवसरों पर वे गरीबों को अन्न, वस्त्र, मिठाई, रुपये देतीं। उन्होंने कुरूक्षेत्र जैसे धार्मिक नगर में तो अपने वजन के बराबर सोना-चाँदी का दान कई बार किया। ठंड में गरीबों, विकलांगों, साधू-संतों और फकीरों को कम्बल देतीं। गर्मी में राहगीरों के लिए जगह-जगह प्याऊ लगवातीं।

अहिल्याबाई दया-ममता की मूर्ति थीं। पशु-पक्षी, जीव-जन्तुओं का भी ध्यान रखतीं। पशुओं के लिए चरागाह और पानी की प्याऊ बनवातीं। पक्षियों के लिए खड़ी-पकी फसल खरीद कर छोड़ देतीं। चीटियों को आटा तो मछलियों को आटे की गोलियाँ डाली जातीं।

अहिल्याबाई अपने कर्मचारियों तथा सैनिकों की सुख-सुविधा का सदैव ध्यान रखतीं। उन्हें समय पर वेतन दिया जाता। वेतन कर्मचारी की योग्यता, स्थान या व्यक्ति विशेष के अनुसार कम

ज़्यादा होता था। शौर्य-पूर्ण कार्य करने तथा स्वामी-भक्त कर्मचारियों, सैनिकों को पुरस्कृत व सम्मानित करतीं। जागीर-जमीन या मकान देतीं। कर्मचारी या उसके परिवारजन की बीमारी में इलाज की व्यवस्था की जाती। संभव होता तो अहिल्याबाई स्वयं उसके घर जातीं और उसे धीरज बंधातीं। कर्मचारियों की बुढ़ापे में सहायता-सेवा भी की जाती थी।

अहिल्याबाई ने बद्रीनाथ-केदारनाथ के मार्ग में, रामेश्वरम, जगन्नाथपुरी, द्वारका, पैठण, महेश्वर, वृंदावन, सुपलेश्वर, हंडिया, उज्जैन, पुष्कर,पंढरपुर, चिचवाड़,चिखलदा, आलमपुर, देवप्रयाग, राजापुर आदि स्थानों पर अन्नसत्र या सदावर्त खुलवाए थे, जहाँ लोगों को प्रतिदिन भोजन मिलता था।

बिना भेदभाव के सेवा-सहायता का कार्य अहिल्याबाई ने संपूर्ण देश में किया। हर दिशा में अहिल्याबाई के कल्याणकारी एवं परोपकारी कार्यों की गूँज थी। इन सभी कार्यों के द्वारा उन्होंने एक-राष्ट्र निर्माण का महान कार्य किया। देश में धार्मिक, सामाजिक राष्ट्रीय एकता कायम करने के प्रयास किये।

अहिल्याबाई प्रजा के सुख-दुख के प्रति सदा सजग रहती थीं। उनका कहना था–"भगवान शंकर ने मुझे जो उत्तरदायित्व सौंपा है, उसे मुझे निभाना है। मेरा काम प्रजा को सुखी रखना है। राज्य के प्रत्येक काम के लिए मैं जिम्मेदार हूँ। राज्य में मैं जो कुछ भी कर रही हूँ,उसका ईश्वर के यहाँ मुझे जवाब देना है।"

दरबार के द्वार

अहिल्याबाई अपनी प्रजा को बहुत चाहती थीं। उसके दुख-दर्द को अपना दुख-दर्द समझती थीं। कोई भी व्यक्ति बेरोकटोक उनके दरबार में आ-जा सकता था। प्रजा के लिए उनके दरबार का द्वार हमेशा खुला था। प्रजा के दुखों को दूर करना वे अपना कर्त्तव्य मानती थीं। सरकारी कर्मचारियों की शिकायतें,

आपसी विवादों और पारिवारिक समस्याओं को लेकर लोग अहिल्याबाई के पास आते। वे सभी की समस्याओं का संतोषजनक हल करती थीं। उनकी निष्पक्षता, सच्चे न्याय की प्रशंसा, जनता, साहूकार, राजा ही नहीं, चोर-डाकू-लुटेरे भी करते थे।

प्रजा को शीघ्र ही सच्चा न्याय प्राप्त होता था। अहिल्याबाई के दरबार में किसी के साथ अन्याय नहीं होता था। लोग दुखी मन से, रोते हुए उनके पास आते थे और खुशी-खुशी, हँसते हुए जाते थे। इसी कारण प्रजा की उनके प्रति अपार श्रद्धा थी। लोग उन्हें देवी और "लोकमाता" मानने लगे थे।

कम कर

कर ही राज्य की आमदनी का साधन होता है। सरकार कई तरह के कर लगाती है। अहिल्याबाई ने कोई नया कर नहीं लगाया था। कई पुराने कर समाप्त ही कर दिए थे। कुछ करों की दर कम कर दी थी। फिर भी राज्य की आमदनी बढ़ गई थी। प्रजा खुशी-खुशी कर चुकाती। सूबेदार मल्हारराव के समय वार्षिक आय 75 लाख रूपये थी। अहिल्याबाई के समय वार्षिक आय सवा करोड़ हो गई थी।

एक बार की बात है—

अहिल्याबाई को कर बढ़ाने की सलाह, कुछ लोगों ने दी। यह सलाह उन्हें ठीक नहीं लगी। यह जनहित विरोधी कार्य था। अहिल्याबाई ने उन लोगों से कहा— "मेरे राज्य में कर बढ़ाए नहीं, कम किए जाएंगे। कर बढ़ाकर प्रजा को दुखी नहीं करना है। कर कम करके प्रजा को सुख पहुँचाना ही कुशल शासक की पहचान है।"

अधिकारी निश्चित राशि से अधिक कर वसूल नहीं कर सकते थे। कर वसूलने की विधि भी आसान थी। एक बार महिदपुर के अधिकारी ने अधिक कर वसूला। लोगों में असंतोष फैला। अहिल्याबाई से शिकायत की गई। उन्होंने शिकायत की

जांच कराई। शिकायत सच निकली। अधिकारी ने अधिक कर वसूला था। अहिल्याबाई ने उसे बुलाया। डाँटा-फटकारा। चेतावनी दी– भविष्य में ऐसी गलती फिर न करें, नहीं तो नतीजा बुरा होगा।

अहिल्याबाई ने अतिरिक्त राशि प्रजा को लौटाने का आदेश दिया। लोगों को अपना पैसा मिल गया। वे फूले न समाये। अहिल्याबाई की जय-जयकार से आकाश गुंजा दिया।

नए नियम

अहिल्याबाई के समय कई राज्यों में नियम था– यदि कोई व्यक्ति निःसंतान मर जाता, तो उसकी सारी सम्पत्ति सरकार जब्त कर लेती थी। उसकी विधवा पत्नी किसी बच्चे को गोद नहीं ले सकती थी।

अहिल्याबाई ने ऐसे नियम समाप्त कर दिए। विधवाओं को बच्चे गोद लेने की अनुमति दी। पति की सम्पत्ति का उपयोग करने की छूट दी। विधवाओं को हर तरह का संरक्षण दिया। कई विधवाओं को बच्चे को गोद लेने की संस्कार विधि को पूर्ण कराया। बच्चों को अपनी ओर से वस्त्र आभूषण भेंट किए।

मध्य प्रदेश का पश्चिमी क्षेत्र निमाड़ कहलाता है। इस क्षेत्र में एक नगर है- खरगोन। यह जिला मुख्यालय है। कुन्दा नदी के किनारे बसा है। यहाँ तापीदास और बनारसीदास दो भाई रहते थे। दोनों का लम्बा-चौड़ा व्यापार था। काफी लेन-देन था। वे बड़े साहूकारों में गिने जाते थे। दुर्भाग्य से उनके यहाँ कोई संतान नहीं थी। निःसंतान ही उनका निधन हो गया था। अपार सम्पत्ति, अनेक मकान-दुकानें वैभव विहीन हो गये। रिश्तेदार सम्पत्ति हड़पने की चालें चलने लगे।

तापीदास की पत्नी थी गंगाबाई। वह अहिल्याबाई के पास पहुँची। अपनी सारी व्यथा कही। अंत में कहा– "माँ, मैं अपने पति व देवर की सारी सम्पत्ति आंपको अर्पित करना चाहती

अहिल्याबाई ने उसे धीरज बंधाते हुए कहा– "तुम्हारे पति की सम्पत्ति तुम्हारी है। इस पर न राज्य का अधिकार है, न किसी दूसरे का। तुम चाहो तो किसी बच्चे को गोद ले लो। अपनी सम्पत्ति जन-कल्याण के कार्य में खर्च करो। इससे सम्पत्ति का सदुपयोग होगा। तुम्हारे परिवार का भी नाम होगा।"

गंगाबाई ने कहा– "जैसी आपकी इच्छा माँ । आपने जैसी सलाह दी है मैं वैसा ही करूँगी। मेरे पति गणपति के परम भक्त थे। उनकी स्मृति में खरग़ोन में कुन्दा नदी के किनारे एक गणेश मंदिर बनवा दूँ।"

"यह तो अच्छा काम है। और क्या करना चाहती हो"– अहिल्याबाई ने पूछा।

गंगाबाई सोच में पड़ गई। आँखों के सामने कुंदा नदी बहने लगी। चौड़ा पाट, कच्चा घाट। तट पर नहाते लोगों की याद आई। वह बोली– "माँ मैं चाहती हूँ, कुन्दा नदी पर विशाल घाट बनवा दूँ। नहाने वालों को सुविधा हो जाएगी।"

"यह तो बड़े परोपकार का काम है। जनहित के इन कामों से लोगों को सुख-सुविधा मिलेगी। वहीं तुम्हारी अमर निशानी बन जायेगी।" अहिल्याबाई ने कहा।

उनका मत था–किसी का भी धन बल पूर्वक लेना पाप है, धर्म विरुद्ध है।

धार्मिक उदारता

अहिल्याबाई धर्म-परायण महिला थीं। धर्म और संस्कृति के विकास के लिए अहिल्याबाई ने अनेक कार्य किये। धर्म के विषय में वे काफी उदार थीं। सभी धर्मों का आदर करती थीं। उनकी धार्मिक नीति का मूल उद्देश्य था– नैतिक मूल्यों का पालन, सद्कार्य और परमार्थ करना। धार्मिक सहिष्णुता व प्राणिमात्र की सेवा को ही वे अपना सच्चा धर्म मानती थीं।

उन्होंने प्रजा को पूर्ण धार्मिक स्वतंत्रता दे रखी थी। किसी पर अपना धर्म जबरन थोपा नहीं था न ही धार्मिक कर लगाया। उन्होंने होलकर राज्य में ही नहीं, संपूर्ण भारत में मंदिर-मस्जिदों का जीर्णोद्धार कराया। साधू-संतो, फकीर-मौलवियों को राज्याश्रय, जमीन और जागीरें दीं।

धर्म स्थलों पर पूजा-पाठ आदि की स्थायी व्यवस्था की। धर्म के इन कार्यों का राज्य से कोई संबंध नहीं था। दान-धर्म के कार्य में अहिल्याबाई खासगी सम्पत्ति में से खर्च करतीं। सरकारी खजाने का पैसा राज्य व जन-कल्याण में ही खर्च करतीं। धार्मिक कार्य स्थानीय लोग पीढ़ी दर पीढ़ी करते। इन लोगों को अहिल्याबाई ने जमीन आदि के दान-पत्र दिये थे। इस कारण ये कार्य आज भी यथावत चल रहे हैं।

काशी में अहिल्याबाई ने ब्रह्मपुरी नामक बस्ती का निर्माण कराया था। यह बस्ती एक विशाल आश्रम के समान थी। यहाँ पर देशभर के धर्मशास्त्र के विद्वानों और ब्राह्मणों को बसाया। ये लोग यहाँ वेद, शास्त्र, पुराण आदि धर्म ग्रन्थों का अध्ययन-मनन करते। शास्त्रार्थ एवं धर्म-चर्चा करते। धर्म-ग्रन्थों का सृजन भी करते। इस आश्रम का सारा खर्च अहिल्याबाई देती थीं। इतना ही नहीं, यहाँ धर्म ग्रन्थों की हस्त-लिपियाँ तैयार करवातीं। सज्जन लोगों को ये ग्रन्थ भेंट करती थीं।

उन्होंने भारत में धार्मिक सद्भावना कायम की। हिन्दू अहिल्याबाई के लिए प्रार्थना करते, मुसलमान भाई उनके लिए दुआ करते। मुसलमान भाई होलकर राज्य में कई बड़े पदों पर थे।

प्रसिद्ध इतिहासकार श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य ने लिखा है– ''उनकी धार्मिकता इतनी उदार थी कि धर्म व नीति के हर क्षेत्र में उन्होंने अपना नाम अजर-अमर कर लिया। उनका दान-धर्म इतना महान था कि वैसा दान-धर्म आज तक हिन्दुस्तान में किसी ने भी नहीं किया।''

अंग्रेज इतिहासकार सर जॉन माल्कम ने लिखा है– "वे धर्म परायण होते हुए भी, अद्वितीय सहनशील हैं। उनके भाव विचार परम्परागत रूढियों से प्रभावित होते हुए भी वे उनका उपयोग जनता की भलाई के लिए ही करती रही हैं।

निर्माण कार्य

अहिल्याबाई अपनी धर्म,नीति व न्याय के लिए जितनी प्रसिद्ध हैं, उतनी ही निर्माण कार्यों के लिए भी। उनका राज्य छोटा था, परन्तु निर्माण कार्य का क्षेत्र सम्पूर्ण भारत था। उन्होंने देश के हर कोने में निर्माण कार्य कराये। ये निर्माण दो-ढाई सौ वर्षो से मानव-मात्र की सेवा कर रहे है। मूक वाणी में अहिल्याबाई का यशोगान कर रहे है और युगों तक करते ही रहेंगे।

अहिल्याबाई ने देश के प्रमुख तीर्थ-स्थलों पर विशाल मदिरों का निर्माण कराया। पुराने भवन, जीर्ण मंदिरों का पुनर्निर्माण कराया और देव प्रतिमाओं की स्थापना की।

उस समय आवागमन के साधन सीमित थे। सामग्री एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना सरल नहीं था। ऐसी स्थितियों में अहिल्याबाई ने जो निर्माण कार्य कराये, वे प्रशंसनीय एवं कला पूर्ण हैं।

अहिल्याबाई निर्माण कार्य में कुशल, निपुण, शिल्पियों, कारीगरों को ही लगाती। उन्हें पूरी तरह राज्याश्रय देतीं। महेश्वर कारीगरो का केन्द्र बन गया था। जयपुर के कुशल मूर्तिकारों से अहिल्याबाई ने मूर्तियाँ बनवाई । कारीगरों को नगद वेतन दिया जाता था। पुरस्कार, भेंट और मान-सम्मान भी दिया जाता था।

इन कार्यों से हजारों लाखों लोगों को रोजी-रोटी मिली। भारतीय वास्तुकला को नया जीवन मिला। नई गति और प्रगति का पथ मिला।

अहिल्याबाई निर्माण कार्यों का दायित्त्व चुने हुए लोगों को सौंपती थीं। हर कार्य का हिसाब रखा जाता था। हिसाब की

जाच वे स्वयं करतीं। फिजूलखर्ची उन्हें पसन्द नहीं थी। जरा सी भी लापवाही वे बर्दाश्त नहीं करतीं। निर्माण कार्य में किसी ने गड़बड़ी की तो उसको काम से हटा देतीं। धन-जन के अभाव में कभी कोई निर्माण कार्य रुका नहीं। एक बार हथौड़ी-छेनी, किरणी चली, तो चलती रहीं, जब तक अहिल्याबाई की इच्छानुसार निर्माण कार्य पूर्ण नहीं होता।

देशभर में यात्रियों, राहगीरों के लिए अहिल्याबाई ने असंख्य कुएँ, बावड़ियाँ तथा तालाब बनवाएँ। जगह-जगह प्याऊ लगवाए। अपने राज्य में अनेक सड़कें बनवाई। पुरानी सड़कों की मरम्मत करवाई।

नर्मदा देश की पवित्र नदियों में एक है। इसके तट पर अनेक तीर्थ स्थान हैं। धर्म प्रेमी पैदल नर्मदा की परिक्रमा करते हैं। अहिल्याबाई की नर्मदा नदी के प्रति असीम श्रद्धा थी। उनके जीवन का अधिकांश समय नर्मदा नदी के तट पर ही बीता। नर्मदा तट के दोनों ओर उन्होंने अनेक मंदिर, घाट और धर्मशालएँ बनवाईं।

अहिल्याबाई ने इन निर्माण कार्यों से संपूर्ण भारत को एक सूत्र में बांधा। भारत की अखंडता और एकता कायम की। इन कार्यों से संपूर्ण भारत ही नहीं, विदेशों में भी अहिल्याबाई के यश की सुगंध फैल गई।

परंपरा का नया रूप

गंगा नदी पवित्र नदी है। गंगोत्री इसका उद्गम स्थल है। कहते हैं गंगा का जल कभी भी खराब नहीं होता है। पूजा-पाठ, कथा-अभिषेक में गंगाजल का विशेष महत्त्व है। महाशिवरात्रि हमारे देश का महान पर्व है। इस दिन भगवान शंकर का अभिषेक किया जाता है। पूजा-पाठ, अर्चना, आराधना की जाती है। इस दिन के लिए देश में 40 प्रमुख तीर्थ स्थानों पर गंगोत्री से गंगाजल भेजा जाता है। गंगाजल भेजने की स्थायी व्यवस्था अहिल्याबाई ने की थी। यह कार्य उसी क्षेत्र के पंडे

वंश परम्परागत करते आ रहे हैं। इस कार्य द्वारा अहिल्याबाई ने राष्ट्रीय एकता की आदिगुरु शंकराचार्य की परंपरा को नया रूप दिया।

बामनिया डाक सेवा

अहिल्याबाई के समय डाक व्यवस्था आजकल जैसी नहीं थी। उन्होंने डाक की जो व्यवस्था की थी, वह बामनिया डाक व्यवस्था कहलाती थी। पाँच-पाँच मील पर चौकियाँ बनाई गईं थीं। एक चौकी से आगे की चौकी तक डाक पहुँचाई जाती थी। अगली चौकी से डाक फिर आगे भेजी जाती थी। डाक लाने-ले जाने वाला हरकारा या कासिद कहलाता था। ये पैदल जाते या घोड़ों पर। कभी-कभी ऊंटनी का भी उपयोग किया जाता था। युद्ध के समय इस व्यवस्था की गति तीव्र हो जाती थी।

हरकारों को राज्य की ओर से निश्चित वेतन दिया जाता था। डाक पहुँचाने में गड़बड़ी होने पर या देर होने पर हरकारों को दंड भुगतना पड़ता था। महेश्वर से पूना तक डाक व्यवस्था अत्यंत सदृढ़ थी। देश के प्रमुख नगरों तक डाक लाने-ले जाने की भी व्यवस्था थी।

13
राजश्री से राजर्षि

भारत के इतिहास में अशोक-धर्माचरण; चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य— शासन प्रबंध, विद्वानों का सम्मान एवं न्याय; हर्षवर्धन— दानशीलता; अकबर— उदार धर्मनीति; मीराबाई— भक्ति भावना; रानी दुर्गावती— वीरता; पद्मिनी— त्याग; एवं बलिदान; छत्रपति शिवाजी— साहस व शौर्य के लिए विख्यात हैं।

अहिल्याबाई ही एक ऐसी शासक हुई हैं, जिनमें उपरोक्त शासकों के समस्त महान गुणों का भंडार था। उनका नाम भारतीय इतिहास में सदा स्वर्ण अक्षरों में लिखा रहेगा। इतिहासकार डा. गोटेज ने लिखा है—

''देवी अहिल्याबाई का सादगी पूर्ण जीवन, नीति युक्त शासन और कुशल राजनीति का संसार के इतिहास में एक विशेष स्थान है।''

अहिल्याबाई 70 वर्ष की हो चुकी थीं। 29 वर्षों से शासन चला रही थीं। दिन-रात परिश्रम करतीं। नियमानुसार उपवास-व्रत रखतीं लेकिन दुर्भाग्य उनके पीछे लगा रहा। प्रियजन एक के बाद एक स्वर्गवासी होते गये। इससे उनका मन शिथिल होने लगा। कमजोरी बढ़ती रही। स्वास्थ्य गिरने

लगा। दिव्य विभूतियों को ज्ञात हो जाता है कि अब उनका अंतिम समय आ गया है। अहिल्याबाई को भी आभास हो गया।

उन्होंने विशेष रूप से दान-दक्षिणा दी। मृत्यु पूर्व के संस्कार पूर्ण कराए। तुलसीजल, गंगाजल, नर्मदा जल लिया और शिवचरणों में ध्यान लगाया। महेश्वर में नर्मदा का तट। तट पर बने किले का शयन कक्ष। श्रावण का पवित्र महीना।

13 अगस्त सन् 1795 के दिन अहिल्याबाई की दिव्य आत्मा परमात्मा में समा गई। कहते हैं, इधर अहिल्याबाई ने शरीर छोड़ा और उधर उनकी प्यारी गाय श्यामा ने भी प्राण त्याग दिए।

सारे देश में अहिल्याबाई के निधन की खबर जंगल के आग की तरह फैल गई। जिसने सुना, उसकी आँखे नम हो गई। नर्मदा का तेज बहाव, धीमा पड़ गया। आकाश में घटा छा गई। पेड़-पौधे स्थिर से हो गए। प्रकृति भी व्याकुल हो उठी।

असंख्य लोग महेश्वर पहुँचने लगे। सभी देवी का अंतिम दर्शन करना चाहते थे। नर्मदा के किनारे, चन्दन की चिता बनाई गई। देखते-देखते अग्नि की लपटों में उनका शरीर समा गया।

यशवंतराव होलकर ने नर्मदा तट पर अहिल्याबाई की छत्री बनवाई। इसके निर्माण में चौंतीस साल लगे। लगभग डेढ़ करोड़ रुपये खर्च हुए। यह छत्री अत्यंत सुन्दर थी। इसे मालवा का ताजमहल कहा जाता हैं। इसे देखने हजारों लोग महेश्वर आते हैं और देवी को श्रद्धा-सुमन चढ़ाते हैं।

अहिल्याबाई संसार में नहीं रहीं। धर्म-कर्म ने उन्हें अमर कर दिया। सामान्य परिवार में जन्म लेकर भी विशाल राज्य की महारानी बनीं। प्रजा की ममतामयी माँ बन गईं, लोकमाता बन गईं। राज्यश्री के रूप में होलकर परिवार में आईं और राजर्षि के रूप में संसार में प्रसिद्ध हुईं। वे अतुल राजकीय वैभव, धन-सम्पत्ति की मालकिन थी। पर इसका उन्हें जरा भी

दंभ नहीं था। जीवन सहज-सरल था। वे भावना से धर्म-प्रधान थीं। विनम्रता, सदयता, उदारता तथा ममता उनके विशेष गुण थे।

कवि मोरोपंत का कहना है—

"देवी अहिल्याबाई का निष्ठावान और कर्त्तव्य परायण चरित्र महाराष्ट्र में लोकप्रिय है। वे गंगानदी के समान पवित्र हैं। सदा सद्भावना युक्त कार्य कर सभी का कल्याण करती हैं। इन्हीं सद्गुणों के कारण वह जन-जन के हृदय में स्थान ग्रहण किये हुए हैं।"

प्रजा को वे संतान की तरह चाहतीं। अपने कर्मचारियों का सदा ध्यान रखतीं। वे नियम-विरुद्ध कार्य की सख्त विरोधी थीं। वे अत्याचार अन्याय को सहन नहीं करती थीं। वे प्रशंसक और चापलूसों से दूर रहती थीं।

एक कवि ने उनकी प्रशंसा में काव्य-ग्रन्थ लिखा। अहिल्याबाई ने उसका कुछ अंश सुना। कवि महोदय को कहा— "इसे रख दीजिए और चले जाइए।" बेचारा कवि बहुत निराश हुआ। खाली हाथ दरबार से लौटा। अहिल्याबाई ने उस ग्रन्थ को नर्मदा में प्रवाहित करवा दिया।

अहिल्याबाई कम पढ़ी-लिखी थीं। वे प्रतिदिन सूर्योदय के पूर्व उठतीं और स्नान करतीं। पूजा-पाठ करके धर्म ग्रन्थ पढ़तीं। विद्वानों से वेद पुराण-सुनती। निर्धनों, असहायों व ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा देती। इसके बाद भोजन करतीं। थोड़ी देर आराम करती। फिर दरबार में जातीं। शाम 6 बजे तक राज-काज करती। शाम को पुनः पूजा-पाठ करतीं। भोजन के बाद 9 बजे दरबार में बैठती। आधी रात तक काम काज करती रहतीं। फिर कहीं विश्राम कर पातीं।

विद्वानों, पंडितों, कीर्तनकारों और कवियों का मान-सम्मान करतीं, सेवा-सहायता करतीं। उनके दरबार से कोई खाली हाथ नहीं जाता था।

संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान कवि खुशालीराम ने अहिल्याबाई के बारे में लिखा है--

> "अहिल्याबाई ने सांसारिक मोह माया, भौतिकवाद छोड़कर अपने तन, मन और वाणी को शुद्ध तथा निर्मल कर लिया था। वे सबकी बातें ध्यान से सुनतीं। भली-भाँति समझतीं। वे प्रत्येक की आत्मा को अपनी आत्मा समझतीं। सबके साथ प्रेम, दया और सद्भवना पूर्ण व्यवहार करती थीं।"

उनके समय में स्त्रियों की दशा दयनीय थी। उन्हें घर की दीवारों में कैद रखा जाता था। पति की सम्पत्ति पर पत्नी का अधिकार नहीं था। विधवा किसी बच्चे को गोद नहीं ले सकती थी। अहिल्याबाई ने ऐसे नियम को समाप्त कर दिया। स्त्रियों के हित में कई काम किए। वे स्वयं पर्दा नहीं करती थीं और न ही पर्दा करने की सलाह देती थीं।

अहिल्याबाई ने वीरता-धीरता, दूरदर्शिता तथा निपुणता से शासन कर एक आदर्श कायम किया। उन्होंने सिद्ध कर दिया कि एक नारी, पुरुष से अधिक श्रेष्ठ कार्य कर सकती है। नाना फड़नवीस ने कहा था--

> "अहिल्याबाई पुरुषार्थ, दूरदर्शिता व महानता में अद्वितीय हैं। कोई भी इन बातों में उनकी बराबरी नहीं कर सकता है।"

हैदराबाद के निजाम और मराठा साम्राज्य में शत्रुता थीं। अहिल्याबाई मराठा साम्राज्य का ही अंग थीं। फिर भी निजाम अहिल्याबाई का अत्यन्त आदर करता था। उसका कहना था--

> "देवी अहिल्याबाई के समान अभी कोई दूसरा शासक नहीं है। उसने स्वर्गीय मल्हारजी द्वारा संग्रहित धन को राज्य के शुभ कार्यों में लगाया है। वह एक योग्य और महान राजनीतिज्ञ हैं।"

अहिल्याबाई में "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना थी। वे प्रेम, शांति में विश्वास करती थीं। प्राणी मात्र की सेवा–सहायता उनका आदर्श था। अहिल्याबाई ने कर्त्तव्य की वेदी पर भावनाओं तथा जीवन का बलिदान किया। स्वयं ने असहनीय दुख झेले पर दूसरों को सुख पहुँचाया। मुगलों का दरबार दिल्ली में था। पेशवा का प्रतिनिधि श्री हिंगने दिल्ली दरबार में था। उसका कहना है–

"अहिल्याबाई में शासन करने की पूर्ण क्षमता है। वह सदा सदाचार पूर्ण व्यवहार के साथ जनता की सेवा में पूर्ण रूप से लगी हुई हैं। यह उनका जन्मजात गुण है।"

अहिल्याबाई के समय राजतंत्र था। सामन्तशाही व साम्राज्यवाद का बोल बाला था। शासक वर्ग आनन्द विलास में डूबा रहता। छोटी-छोटी बातों के लिए युद्ध छिड़ जाते थे। प्रजा अत्यंत दुखी थी। उसकी कोई परवाह करने वाला नहीं था। आचार्य विनोबा भावे के अनुसार–

"अहिल्या देवी का व्यक्तित्त्व वज्र-सा कठोर तथा फूल-सा कोमल था। संसार व्यक्ति की पूजा नहीं करता, पर उसके दृष्टिकोण व कार्य की पूजा करता है।"

उनके व्यक्तित्त्व में हीरे-सी आभा थी। चुम्बकीय आकर्षण था। जो भी उनसे मिलता, प्रभावित हो जाता। अहिल्याबाई की जिंदगी खुली किताब है। उनके जीवन की हर घटना प्रेरणाप्रद है। नई पीढ़ी के लिए उनका जीवन चरित्र एक आदर्श है।

उन्होंने शासन और धन दोनों का सदुपयोग किया। प्राणी मात्र की निःस्वार्थ सेवा ही उनका धर्म था। उन्होंने जीवन भर विपत्तियों के प्रहार सहे फिर भी धर्म-कर्म पर अटल रहीं। उनकी यश पताका युगों-युगों तक, इतिहास के आकाश में फहराती रहेगी।